भीमसेन त्यागी

जन्म 19 सितम्बर, 1935। जन्मस्थान बरवल, जिला बहराइच (पूर्वी उत्तरप्रदेश), लेकिन बचपन पश्चिमी उत्तरप्रदेश में बीता, वहीं शिक्षा हुई और वहीं कार्यक्षेत्र रहा।

शिक्षा पूरी करने के बाद कुछ वर्षों तक दिल्ली निवास। स्वतन्त्र लेखन और कई पत्र-पत्रिकाओं का सम्पादन। सोवियतसंघ के लिए 1970 तक यही जीवनचर्या। इसके बाद पूरी तरह लेखन पर निर्भर। समकालीन कथाकारों में अग्रगण्य। कहानी और उपन्यास के अलावा बालोपयोगी साहित्य, भाषा-संस्करण और पटकथाओं की रचना। इधर वर्षों से कभी देहरादून, कभी दिल्ली रहते हुए भ्रमण। लोक-जीवन और यात्राओं में विशेष दिलचस्पी। उनके बारे, लोक-जीवन से जुड़कर ही साहित्य सार्थक होता है।

प्रमुख प्रकाशित पुस्तकें : नया शहर, काला गुलाब (उपन्यास), दीवारें ही दीवारें, अमन (कहानी-संग्रह), आदमी से आदमी तक (शब्दचित्र)। इन दिनों एक बृहद् उपन्यास पर कार्य।

आवरणचित्र

अनिल करंजई (जन्म 1940) की चित्रकृति। कलाशिक्षा वाराणसी में। 1962 में 'डेविल्स वर्कशाप' ग्रुप की स्थापना की। काठमाण्डू (नेपाल), बनारस और दिल्ली में प्रदर्शनियाँ आयोजित कीं। 1972 में ललित कला अकादेमी का राष्ट्रीय पुरस्कार मिला। 1974 में अमेरिका गये। अब दिल्ली में रहते हैं।

प्रायः लैंडस्केप्स पर काम करते हैं। कई ऐसे भूदृश्यों की रचना भी की है जिनमें लैंडस्केप नहीं हैं—पेड़ हैं, चट्टानें हैं और किसी पार्क का नज़ारा के हिस्से हैं। इनमें लैंडस्केप न होने के बावजूद एक 'भावमय उपस्थिति' है। लैंडस्केप उनके चित्रों में इस रूप में भी है, मानो इतिहास के पन्नों से निकली हो। खंडहरों, अवशेषों और नयी इमारतों—बस्तियों के बीच एक आवाजाही उनके चित्रों में है। मनुष्य की अन्तश्चेतना के विकास और आदमी की मुक्ति-आकांक्षाओं का स्वर भी उनके चित्रों में निहित है।

राष्ट्रीय आधुनिक कला संग्रहालय (नयी दिल्ली) समेत कई संग्रहों में काम है।

भीमसेन त्यागी

नंगा शहर

बाला के लिए

काली सुबह

शहर के बीचोबीच बहुत बड़ा गोल पार्क है, पार्क के चारों तरफ खुली सड़क और सड़क के साथ-साथ 'स्काई-स्क्रैपर्स' की कतार चली गयी है। यह कतार कहीं भी खत्म नहीं होती। दुनिया में और कहीं इतने ऊँचे और इतने शानदार स्काई-स्क्रैपर्स एक जगह नहीं हैं। यह सेन्ट्रल-मार्केट है। बेसमेण्ट में डिस्कोथिक और पब हैं और उनके ऊपर बड़े-बड़े डिपार्टमेंटल स्टोर। रोजमर्रा के काम की चीजों के अलावा खूबसूरती, ईमानदारी, सचाई—यानि हर वह चीज जो बिकाऊ है, इस मार्केट में मिल जाती है। यहाँ एक लम्बे अरसे से इन तमाम चीजों का व्यापार हो रहा है। यह मार्केट अपनी खूबसूरती और शान के लिए दुनिया-भर में मशहूर है। मार्केट से निकलनेवाली सड़कें खून की शिराओं की तरह पूरे शहर में फैली हैं।

मैं सुबह-ही-सुबह सेन्ट्रल-मार्केट में पहुँचा तो चारों तरफ कोहरा छाया था। खूब घना कोहरा। धुनी हुई बर्फ के रेशे आकाश में तैर रहे थे। तभी सामने क्षितिज पर सूरज का गोला उछल आया। सूरज—एकदम निस्तेज। जैसे पतले कागज का गोला काटकर आकाश पर चिपका दिया गया हो। अच्छा लगा। इस सूरज से आँखें मिलायी जा सकती हैं। मैं सूरज की बीमार रोशनी में कोहरे के छटपटाते जर्रों को देखता रहा।

कोहरे में लिपटे अधउजेले में जो कुछ दिखायी दिया, उससे मैं भीतर तक काँप उठा। आधा शहर लूटपाट में लगा है और बाकी आधा पार्क में और खुली सड़कों पर वह सब कर रहा है, जो कि अँधेरे बन्द कमरों में किया जाता है। वहशी आवाजें एक-दूसरी को काटती तेजी से लपक रही हैं। स्नायुतोड़ संगीत पूरे वातावरण में भरा है।

मेरे ठीक सामने एक खूबसूरत नौजवान खड़ा है। उसकी चीते-जैसी आँखें सड़क पर जमी हैं। एक कमसिन इधर-उधर देखती सहमे . से चली

आ रही है।

अचानक चीता लड़की पर टूट पड़ा और एक ही झटके में उसे नीचे गिरा दिया।

लड़की की चीख पूरे मार्केट को काटती चली गयी।

नहीं, मैं और ज्यादा बरदाश्त नहीं कर सकता—मेरे भीतर का जानवर गुर्राने लगा। मैं तेजी से सड़क फलाँगकर उसके पास पहुँचा।

नौजवान ने लड़की को बाँहों में दबोचकर ऊपर उठा लिया है और वह जोर-जोर से ठहाके लगा रहा है। लड़की की चीखें ठहाकों में डूबती जा रही हैं।

"ऐ! यह क्या बदतमीजी है?" मैंने अपने भीतर से सारा गुस्सा निचोड़कर कहा।

नौजवान पर कोई असर नहीं हुआ। उसने लड़की को और भी जोर से भींच लिया।

लड़की की एक और भी पैनी चीख निकल गयी।

"सुना नहीं तूने?" मैंने फिर कहा, "छोड़ दे लड़की को!"

अब नौजवान ने मेरी तरफ देखा, "मुझसे कह रहे हो?"

"और किससे?"

वह धीरे-से मुस्कराया। उसका जिस्म काफी मजबूत है। लेकिन जितना मजबूत है, वह शायद उससे कहीं ज्यादा समझ रहा है।

मैंने वर्षों तक 'बॉडी-बिल्डिंग' का अभ्यास किया है। मन में आया—कलाई पकड़कर एक झटका दे दूं तो सारी बहादुरी निकल जाये। हराम-जादा!

लेकिन फौरन बाद मेरे मन में एक ऐसा नेक खयाल आ गया, जैसा कि ऐसे मौकों पर अक्सर भले आदमियों के मन में आता है। सोचा—दूसरे की आग में तू क्यों हाथ जलाता है!

नौजवान उस लड़की को बींध रहा है और वह घायल मछली की तरह तड़प रही है।

मैं पास ही खड़ा सबकुछ देख रहा हूँ—सबकुछ।

लड़की थोड़ी देर तुड़फुड़ायी। फिर ठण्डी हो गयी।

मैं थका हुआ चुपचाप खड़ा हूँ, जैसे बलात्कार मेरे ही साथ किया गया हो! बलात्कार···मेरे साथ ही तो हुआ है। हर वक्त होता रहता है।

अचानक मुझे लगा—पूरे शहर का बोझ मेरे कन्धों पर लदा है और मेरी कमर झुकती जा रही है। मैंने सीधा खड़ा होने की कोशिश की। रीढ़ की हड्डी को छूकर देखा। यह तो सीधी है—बिल्कुल सीधी। सीधी

है तो ऐसा क्यों लगता है कि कमर झुकती जा रही है ! यह कैसा बोझ है, जो मेरे कन्धों पर लदा है ? कन्धों पर या दिमाग पर ?

नौजवान ने सीधा खड़ा होने के बाद विजय-दर्प से देखा।

सामने से तीन लड़कियाँ मिलिट्री के घोड़ों की तरह दनदनाती चली आ रही थीं। तीन के मुँह से खुशबू के भभके निकल रहे थे। पास आते ही उनमें से एक ने नौजवान के मुँह पर जोर का चाँटा मारा। चेहरा ईंट बन गया। दूसरी लड़की ने उसके कपड़े फाड़ डाले और तीसरी बाल नोचने लगी। फिर वे तीनों एक साथ उस पर टूट पड़ीं। शरीर के हर हिस्से को कचोटना शुरू कर दिया। थोड़ी ही देर में नौजवान के गोरे शरीर पर जहाँ-तहाँ खून छलक आया। दिमाग बुरी तरह भन्ना उठा।

तीनों लड़कियाँ अपने होंठों पर से विष चाटती आगे बढ़ गयीं।

नौजवान ने टूटा हुआ शरीर वापस कपड़ों को पहनाया और भय-भीत बच्चे की तरह लड़कियों को देखता रहा।

मैं अपने ऊपर विश्वास नहीं कर सका। आखिर यह क्या हो रहा है? क्यों हो रहा है ? कहीं मैं सपना तो नहीं देख रहा ? लेकिन सपना कैसे हो सकता है ! ठीक-ठीक याद है - मैं सुबह सोकर उठा था। फिर कोहरे को चीरता यहाँ तक आया था···लेकिन हो सकता है—यह सब भी सपने में ही हुआ हो। अजीब हिमाक़त है। मुझे यह भी पता नहीं कि मैं जो जिन्दगी जी रहा हूँ, वह जिन्दगी ही है या सपना ? या जो सपना मैं देख रहा हूँ, यह सपना ही है या जिन्दगी ? मैं जैसी जिन्दगी जीता रहा हूँ, वही क्या किसी सपने से कम भयावह है ? नहीं, यह सपना नहीं है। होता तो इस दृश्य पर आकर टूट जाता। सपने कितनी आसानी से टूट जाते हैं। लेकिन जिन्दगी ? जिन्दगी सचमुच बड़ी बेशर्म है।

बेशर्मी नंगी सड़क पर बिखरी पड़ी है।

क्या बदतमीजी है ? कोई भी इसे रोक नहीं सकता ? कोई भी ?

सामने से एक मेरे ही जैसा मामूली आदमी आता दिखायी दिया। मैंने उससे पूछा, "क्यों भई, यह सब क्य। हो रहा है ?"

वह मुस्कराया, "तुम्हें नहीं मालूम ?"

"नहीं।"

"तुमने ऐलान नहीं सुना ?"

"ऐलान ?"

"हाँ, सुबह ही ऐलान कर दिया गया था कि आज 'उन्मुक्तता-दिवस' मनाया जायेगा।"

"क्या मतलव ?"

"मतलव यह कि एक दिन के लिए शासन और समूह ने इनसान के ऊपर से तमाम पावन्दियाँ उठा ली हैं। कोई भी नीति-नियम, कोई भी वर्जना-वन्धन आज लागू नहीं होगा। कोई भी अपराध आज अपराध नहीं है। आज इनसान कुछ भी कर सकता है! अपने किये के लिए उसे किसी के भी सामने जवावदेह नहीं वनना पड़ेगा।"

"अजीव वात है!"

"अजीव कुछ नहीं।" उसने सहज ढंग से कहा, "यह जो कुछ भी हो जाये, सो कम है।"

मैं आगे वढ़ गया।

सेन्ट्रल-मार्केट से निकलने के वाद 'ब्रॉडवे' पर दायें हाथ एक शानदार स्काई-स्क्रैपर है। दो सौ मंजिल ऊँचे इस स्क्रैपर का नाम है 'रॉकी'। रॉकी मीलों लम्वे और उतने ही चौड़े जमीन के टुकड़े पर वनाया गया है और वह चारों तरफ से खूवसूरत लॉन और वागीचों से घिरा है।

रॉकी की चोटी से ठहाकों की भयानक गूँज उठती है और पूरे आकाश पर छा जाती है।

मैं सैंकड़ों वार रॉकी के सामने से गुजरा हूँ और ललक के साथ उसे देखा है। वहुत वार इच्छा हुई कि काश! मैं उसे भीतर से देख पाता!

लेकिन देख कैसे पाता?

इस रहस्यमय स्काई-स्क्रैपर और इससे भी ज्यादा रहस्यमय इसके मालिक के वारे में दुनिया के तमाम समाचार-पत्रों में अजीवोगरीव समाचार प्रकाशित होते रहते हैं। उसके पास अपार सम्पत्ति है और यह सम्पत्ति हर क्षण वढ़ती रहती है। वह संसार का सवसे धनी व्यक्ति है। अधिकांश महत्त्वपूर्ण कारखाने, खदानें, अन्तरिक्ष-कार्पोरेशन, अनुभव-कार्पोरेशन, समाचार-पत्र और व्यापार-चैम्वर उसके पास हैं। पूरी अर्थव्यवस्था पर उसका कब्जा है और वह ही इस विराट शासन-तन्त्र का सर्वोच्च सत्ताधिकारी है। यह सव होते हुए भी वह कभी किसी से नहीं मिलता। न ही कोई उससे मिल सकता है। उसे किसी ने नहीं देखा। कोई भी उसकी शक्ल को नहीं पहचानता। अगर वह किसी को सड़क पर मिल जाये तो दूसरा आदमी यह नहीं जान सकता कि वह 'उससे' मिल रहा है। अपने काम-काज के सिलसिले में वह वहुत कम लोगों से सम्पर्क रखता है। उनसे भी मिलता नहीं, केवल टेलिस्क्रीन पर आदेश देता है। वह जिसे आदेश दे रहा होता है, उसे पूरी तरह—भीतर तक—देख रहा होता है। लेकिन

दूसरे व्यक्ति को वह कतई दिखायी नहीं देता। सिर्फ उसकी आवाज सुनायी देती है। इस आवाज के बल पर ही उसने इतनी बड़ी सम्पत्ति और इतनी बड़ी ताकत हासिल की है!

पिछले दिनों अफवाह फैली कि वह मर गया है। लेकिन थोड़े दिन बाद दूसरी अफवाह फैल गयी कि वह मरा नहीं, जिन्दा है। कहीं उसकी आवाज सुनी गयी है। अक्सर इसी तरह की अफवाहें फैलती हैं और फिर दूसरी तरह की अफवाहें। उसने सच और झूठ को इस तरह गड़मड कर दिया है कि उन्हें अलग-अलग पहचाना नहीं जा सकता।

वह तीन हजार कमरों के टॉवर में अकेला रहता है। इन तमाम कमरों में कम्प्यूटर और संचार तथा रिकार्ड की मशीनें लगी हैं। उसके पास लाखों आँखें और लाखों दिमाग हैं। ये आँखें और ये दिमाग हर समय उसके लिए काम करते रहते हैं।

मैं कुछ देर चुपचाप खड़ा टॉवर को देखता रहा। अजीब गोरखधन्धा है। हर कोई उसके इस धन्धे में उलझा है। इस धन्धे से निकलने का आखिर क्या उपाय है?

अचानक मेरे सामने एक तीखी रोशनी कौंधी और उसके पीछे से दो बड़ी-बड़ी दहकती हुई आँखें उभर आयीं। वे आँखें मुझे घूर रही हैं—बुरी तरह घूर रही हैं। नजर का पैना बरमा भीतर तक बींधता जा रहा है। लगा—मैं खड़ा नहीं रह सकूँगा। अभी—बिल्कुल अभी—गिरकर ढेर हो जाऊँगा।

मैं गिरकर ढेर होता, इससे पहले ही वे खौफनाक आँखें गायब हो गयीं। मैं धीरे-धीरे अपने में लौटा।

आँखें गायब हो गयीं, लेकिन मेरा पूरा शरीर अभी भी काँप रहा है। लगता है जैसे उन आँखों ने शरीर की सारी शक्ति सोख ली है। यह सब क्या था, मैं सोचना चाहता हूँ। लेकिन कुछ भी सोच नहीं पाता। दिमाग एकदम खाली हो गया है।

मेरा हाथ मुझसे बिना पूछे जेब में गया और उसने 'ड्रग-पाउच' निकाल लिया। दूसरे हाथ ने उसे जल्दी-जल्दी खोला और भूरे रंग की एक टेब्लेट मेरे मुँह में डाल दी।

थोड़ी देर बाद कँपकँपी बन्द हो गयी और मुझे लगा कि मैं हूँ। यह दवा आज मेरे पास न होती तो क्या होता? वही, जो एक-न-एक दिन होना है। सबके साथ होना है। अच्छा था, अगर वह आज ही हो [illegible] हर समय दवाओं के सहारे घिसटनेवाली इस जिन्दगी से तो [illegible]

उत्तेजना और आतंक हर समय घेरे रहते हैं। और इनसे राहत पाने का उपाय केवल दवाओं के पास है। घबराहट दूर करनी हो तो दवा, नशा करना हो तो दवा, नींद लेनी हो तो दवा, सपना देखना हो तो दवा। दवाओं के बिना आप चल ही नहीं सकते। लेकिन दवाएँ भी क्रूर वास्तविकता को बदल कहाँ पाती हैं, वे उसे सिर्फ खण्डित कर देती हैं। आप जितनी अधिक दवाएँ खाते हैं, उतने ही भीतर से खोखले होते जाते हैं।

अब मेरे लिए वहाँ खड़ रहना मुश्किल था। मैं वापस सेन्ट्रल-मार्केट की तरफ मुड़ा और धीरे-धीरे आगे बढ़ने लगा। शरीर एकदम बेजान हो गया था और पैरों में फिर कँपकँपी होने लगी थी। दायें हाथ पार्क आया तो मैं उसमें घुसा और एक कोने में चुपचाप बैठ गया।

कोहरा लगभग छँट चुका है। कच्ची धूप पंख फैला रही है। मन हुआ, शरीर को ढीला छोड़कर धूप पर बिछा दूँ।

वहाँ बैठे थोड़ी ही देर हुई थी कि सामने से एक लड़की आती दिखायी दी। मैं चौंका—अरे ! यह तो वही है। यह लड़की कितने दिन से रोग की तरह मुझे खा रही है। गली में, बाजार में, पार्क में या बस-स्टैण्ड पर — कहीं भी इससे नजर मिल जाती। मिल क्या, छू जाती। लड़की नजर को मिलने नहीं, बस छूने देती और छूकर झटक देती। मैं उस झटके को बरदाश्त न कर पाता।

लड़की के चले जाने के बाद मैं देर तक भीतर-ही-भीतर खौलता रहता। सोचता—कुछ भी हो, इस मामले को साफ करना ही होगा। इसी 'वीक-एण्ड' के लिए उसे बुक कर लेता हूँ और साफ-साफ पूछ लेता हूँ कि आखिर वह चाहती क्या है ?

परेशानी यह नहीं कि मैं उसे चाहता हूँ या उसके द्वारा चाहे जाना चाहता हूँ। परेशानी है सिर्फ यह कि मैं असलियत तक पहुँचना चाहता हूँ। अगर लड़की मुझे प्यार करती है, और मुझे लगता है कि ऐसा है, तो वह खुलती क्यों नहीं ? जब लड़की खुलती नहीं तो मैं ही क्या कर सकता हूँ ! आखिर मैं एक जिम्मेदार आदमी हूँ। यों ही किसी से कैसे उलझ सकता हूँ ? और मान लें, यह सब मेरा भ्रम है, लड़की सचमुच मुझे नहीं चाहती तो वह साफ किनारा क्यों नहीं कर जाती ? बार-बार झटके क्यों देती है ?

मैंने निश्चय कर लिया था कि मैं इस पागल लड़की को कतई लिफ्ट नहीं दूँगा। इस बार मिलेगी तो मैं खुद ही उसे झटक दूँगा।

अगले ही दिन लड़की फिर मिल गयी। उसने मुझे उसी पैनी नजर से

छुआ। और मैं, चाहकर भी उसे झटक नहीं सका। फिर लड़की ही मुझे झटककर चली गयी।

यह लड़की दिनों से कहीं मेरे भीतर फाँस की तरह करक रही है।

वह एकदम सामने आ खड़ी हुई तो मैंने गौर से देखा—आज वह हल्के गुलाबी रंग में है। इस रंग में वह एकदम नशीली लगती है। कभी-कभी वह हरे, पीले या किसी और ऐसे रंग की 'टिन्टेट' था आती है, जो कि मुझे पसन्द न हो। मुझे परेशान करने में उसे मजा आता है।

लड़की का अर्धनग्न गुलाबी शरीर दहक रहा है। पूरी तरह सन्तुलित और कसा-तना शरीर। एक-एक अंग जैसे फाउण्ड्री में ढाला गया हो। उसकी चिकनी त्वचा नजर को झटकती है। जवान मादा खून की गन्ध मेरे नथुनों में घुमने लगी। ऐसे शरीर के लिए मेरी पूरी जवानी तरसती रही है। लेकिन आज उसे इस रूप में पाकर मैं आतंकित हो उठा। सोचा—बात की जाये?

लेकिन इनकार कर दिया तो?

छोड़ो!

लेकिन आज भी छोड़ दिया तो फिर कब?

तो कहो बात!

मैं निश्चय करके भी कर नहीं सका।

लड़की मेरे ठीक सामने डटकर बैठ गयी। उसने मुझे तर नजर से देखा और साफ़ शब्दों में बोली, "तुम मेरा साथ देना पसन्द करोगे?"

"तुम···तुम···" मैं बहक उठा, "यह तुम कह रही हो?"

"हाँ, मैं!"

"तुम वही हो न?"

"हाँ, मैं वही हूँ, लेकिन वह 'मैं' नहीं होनी थी।"

"तो तुम मुझे प्रेम करती हो?"

"यही बेहूदा सवाल मैं तुमसे पूछती हूँ—तुम करते हो मुझे प्रेम?"

मैं 'हाँ' नहीं कह सका।

फिर लड़की ही बोली, "तुम्हारे प्रेम का जो मतलब है, वह मैं अच्छी तरह समझती हूँ।"

"क्या?"

"तुम प्रेम के आवरण में मेरा शरीर पाना चाहते हो। चाहते हो न?"

"जब तुम 'अच्छी तरह' समझती हो तो मुझसे पूछने की क्या तुक?"

"तुक है। बोलो, तुम मेरे शरीर को पाना नहीं चाहते ?"

"चाहता हूं। लेकिन यह इकतरफा कार्रवाई तो नहीं है। मैं किसी के शरीर को पाता हूं तो साथ ही अपने को देता भी हूं। इस आपसी लेन-देन में किसी को भी अहसान जताने की जरूरत नहीं। मैं तो तुम्हारे शरीर को चाहता हूं, लेकिन तुम ?"

"चाहती मैं भी हूं, लेकिन एक शर्त के साथ।"

"शर्त ! आज भी ?"

"हां, आज भी।"

"तो बोलो !"

"पाने से पहले मैं तुम्हें जानना चाहती हूं।"

"जानना ?" मुझे हंसी आ गयी, "बहुत मुश्किल है। हम किसी को जितना जान पाते हैं, उतना ही और जानने की प्यास बढ़ती है। यह जानने की प्रक्रिया ही तो प्रेम की प्रक्रिया है।"

"फिर प्रेम !" लड़की भडक उठी, "मुझे इस शब्द से नफरत है।"

"नफरत है तो जानना क्या चाहती हो ?"

"जानना चाहती हूं—व्यक्ति को। और तुम्हारा यह प्रेम व्यक्ति को व्यक्ति नहीं रहने देता। उसे व्यक्ति से कुछ ऊपर की या फिर एकदम नीचे की चीज बना देता है।"

"जो ऐसा करता है, वह तो प्रेम नहीं।"

"तो फिर प्रेम है क्या ?"

"जानना—भीतर तक जानना।"

"नहीं, तुम झूठ बोलते हो। प्रेम और कुछ नहीं, एक-दूसरे के शरीरों को छीनने के लिए किया जानेवाला नाटक है। मैं कहती हूं—इस नाटक की जरूरत क्या है ? दो शरीरों को बिना किसी भूमिका के, ईमानदारी के साथ एक-दूसरे को नहीं सौंपा जा सकता ?"

"क्यों नहीं सौंपा जा सकता ! रोज सौंपा जाता है। और आज चारों तरफ जो कुछ हो रहा है, वह भी तो यही है। तुम्हें यह सब पसन्द है ?"

"यह सब ? मैं कह नहीं सकती।"

"क्या नहीं कह सकतीं ?"

"कुछ भी नहीं।" कहकर वह एकटक मेरी तरफ देखने लगी।

"तुम नहीं कह सकतीं, लेकिन तुम्हारी आंखें तो कह रही हैं।"

"क्या ?"

"यह मत पूछो।"

लड़की ने पलकें ऊपर उठायीं। उसकी बड़ी-बड़ी आंखों में अंगूरों का

खटास भरा था।

मैंने उन आँखों में छलांग लगा दी।

धीरे-धीरे लड़की का चेहरा गायब होने लगा और उसकी जगह एक और चेहरा उभरने लगा। मेरी पत्नी का चेहरा! ठीक ऐसे ही तो देखती है वह। इन लोगों के पास यही एक जोड़ी आँखें हैं क्या?

लड़की का चेहरा तेजी से दूसरे चेहरे में बदलता जा रहा है। यहाँ भी वह पीछा नहीं छोड़ेगी। कम्बख्त···

"क्या सोचने लगे?" लड़की ने सवाल का सर्प आगे सरका दिया।

मैं अपने में लौटा, "कुछ नहीं, जरा घर का खयाल आ गया था।"

"घर?" सर्प ने फन उठाया, "तुम्हारा घर है?"

"हाँ, है। और रहेगा।" मैंने फन कुचल दिया।

लड़की ने मुझे ऐसे देखा जैसे आज पहली बार देख रही हो। वह बिना कुछ कहे उठी और तेजी से चली गयी।

मुझे लगा, जैसे वह मेरे ऊपर थूक गयी है।

लड़की के चले जाने के बाद मुझे अपनी बेवकूफी पर अफसोस होने लगा। जरा-सी बात पर बना-बनाया खेल बिगाड़ दिया। दुनिया के काम ऐसे चलते हैं? लेकिन नहीं चलते तो न चलें। कोई मुझे लेना चाहता है तो जो कुछ मैं हूँ, उसे ले। ले लिये जाने के लालच में मैं जो कुछ नहीं हूँ, वह दिख नहीं सकता। गलत शर्तों पर मैं बिक नहीं सकता!

सूरज ऊपर चढ़ आया है। कोहरा पूरी तरह छँट गया है। किरणें तिरछी होकर धरती पर पड़ रही हैं। सुनहरी धूप हरी घास पर फैलती जा रही है। धूप अच्छी लगी, साथ ही पेट में कुलबुलाहट होने लगी। रात 'क्रिसमस ईव' की खुशी में बेतहाशा पी गया था। पीते-पीते खाने की सुध भी नहीं रही थी। अब सिर भारी है और पेट में तीखी जलन हो रही है। अभी तक नाश्ता भी नहीं किया। नाश्ता? मुझे फिर घर का खयाल आ गया···

वह बेचारी इन्तजार में बैठी होगी। नाश्ता बना पड़ा होगा और चाय का पानी खौल रहा होगा। सोच रही होगी—वह आयें तो नाश्ता हो। वह कितना प्यार करती है मुझे! सचमुच कितना प्यार! दो मुट्ठी तो हाड़ हैं और उनमें ही इतना प्यार! कहाँ छुपाकर रखती है? प्यार और इस जमाने में! अब तो प्यार सिर्फ पुरानी कविताओं और पुराने उपन्यासों में ही मिलता है। लेकिन वह अभी भी उसी जमाने में जी रही है। उसके

इसके लिए क्या कर सकता हूं? कौन रोकता है, आ जाये वह भी सड़क पर। लेकिन मैं जानता हूं—वह आयेगी नहीं!

वह आये न आये, मैं तो आज उस घर में जाऊंगा नहीं। कतई नहीं।

नहीं जाऊंगा, लेकिन खाना? मैं खाने की तलाश में आगे बढ़ गया। समझदार लोग पहले ही खाने-पीने का सब सामान उठा ले गये थे। तमाम स्टोर खाली पड़े थे। एक बेकरी के सामने भीड़ दिखायी दी। मैं लपककर वहां पहुंचा। अभी-अभी लोगों ने बेकरी का दरवाजा तोड़ डाला था और वे खाने की तमाम चीजों पर गिद्धों की तरह झपट रहे थे। मैं भी गिद्ध बन गया।

एक आदमी बड़ी-सी ब्रेड लिये झपटा जा रहा था। मैं उस पर टूट पड़ा और ब्रेड छीन ली। तभी कोई और तेजी से मेरे ऊपर झपटा। वह ब्रेड छीनना चाहता था। लेकिन मैं इतनी आसानी से देनेवाला कहां था!

छीना-झपटी में ब्रेड का एक बड़ा हिस्सा टूटकर जमीन पर गिर गया और पैरों से कुचला गया।

खाने का ढेरों सामान फर्श पर कुचला पड़ा है। घिन आती है। लेकिन किसी भी तरह की घिन की परवाह किये बिना मैं ब्रेड के लिए जूझता रहा। काफी देर जूझने के बाद हम अलग हुए तो दोनों पस्त हो चुके थे। हमारे जिस्मों पर जहां-तहां खरोंचें पड़ गयी थीं और खून छलक आया था। और ब्रेड? वह दोनों में से किसी के भी पास नहीं थी।

मैं एक तरफ खड़ा होकर सुस्ताने लगा। तभी मुझे एक शख्स के हाथ में 'निशिवड फूड' की बोतल दिखायी दी। मैं उस पर टूट पड़ा। एक ही झपट्टे में बोतल मेरे हाथ में थी। मैं फुर्ती से स्टोर के बाहर निकला और भाग खड़ा हुआ।

थोड़ी दूर भागने पर मैंने पीछे मुड़कर देखा—तीन आदमी मेरा पीछा दबाये आ रहे हैं। मेरे और उनके बीच का फासला कम होता जा रहा है।

दौड़ते-दौड़ते मेरा सांस फूलने लगा। पैर भारी होने लगे। तभी उन तीनों ने मुझे आ दबोचा। उन्होंने बहुत आसानी से बोतल छीन ली और बारी-बारी से उस खाने को पीने लगे।

मैं पास खड़ा उन्हें देखता रहा।

अब खाने के लिए और जूझने की हिम्मत मुझमें नहीं रह गयी है। पूरा शरीर बोझ बन गया है। मैं किसी तरह इस बोझ को संभाले चुपचाप चल रहा हूं!

अपनी पहचान

चलते-चलते अचानक लगा—पूरे शहर का बोझ मेरे कन्धों पर लदा है ! कमर झुकती जा रही है। झुकती ही जा रही है। यह कमर कहाँ तक झुकती रहेगी ? इतना बोझ कन्धों पर लदा है, फिर भी मैं टूट क्यों नहीं पाता ? टूटने के लिए जिस करारेपन की जरूरत है, वह शायद मुझमें है ही नहीं। मैं टूट नहीं पाता, सिर्फ झुकता जाता हूँ।

मैं सुस्त कदमों से धीरे-धीरे उसके आगे बढ़ता रहा। सामने पार्क दिखायी दिया तो पैरों ने आगे सरकने से इनकार कर दिया। मैं पार्क में घुसा और एक कोने में चुपचाप बैठ गया। बैठते ही खयाल आया—आज यह सब क्या हो रहा है ! आखिर इसका मतलब क्या है ? मैं आधी जिन्दगी बिताकर भी यह नहीं समझ पाया कि जिन्दगी का मतलब क्या है ? आखिर हमें जाना कहाँ है ? कहीं जाना भी है या सिर्फ चलते जाना है ? चलते-चलते एक दिन थककर टूट जाना है ? हमें जिन्दगी से क्या पाना है और क्या देना है ? यह पाने और देने का व्यापार फैलाये बिना क्या जिन्दगी का कोई मतलब नहीं है ?

मुझे लगता है कि इस जिन्दगी का कोई गहरा मतलब है। लेकिन वह मतलब क्या है मैं ठीक-ठीक समझ नहीं पाता। एक साथ कई मतलब मेरे दिमाग में घुसते हैं और एक-एक कर सब खारिज हो जाते हैं। मैं फिर अकेला रह जाता हूँ।

मैं आज तक इस छोटी-सी बात को नहीं समझ पाया कि मैं जिन्दगी में कहीं भी टिक क्यों नहीं पाता ! पत्नी में, प्रेमिकाओं में, मित्रों में या व्यवसाय में—किसी में भी तो नहीं ! मैं उन सबसे भागता रहा हूँ। बराबर भागता रहा हूँ। मुझे मालूम है कि कुछ पाने के लिए टिकना जरूरी है। लेकिन कोई कुछ पाना न चाहे तो ?

मुझे इस पाने और देने के धन्धे में से बदबू आती है। देने में दाता का दर्प है और पाने में याचक की मजबूरी। यह दर्प और यह मजबूरी जरूरी

है ? देने और पाने से बेहतर कुछ करना नहीं है ?

मुझे बराबर लगता है कि मेरे भीतर ऐसा 'कुछ' है कि मैं उससे बहुत कुछ कर सकता हूँ। मैंने अपने इस 'कुछ' को जब-जब कामों में झोंका तो चमत्कारिक नतीजे सामने आये। लेकिन उन नतीजों के बावजूद मैं कहीं भी टिक नहीं सका।

क्यों नहीं टिक सका ?

शायद इसलिए कि मैं सिर्फ़ काम नहीं चाहता। काम के माध्यम से अपने को अभिव्यक्त करना चाहता हूँ। मेरे भीतर जो 'कुछ' है, उसे बाहर उसीप्रकार मुक्त हो जाना चाहता हूँ। लेकिन काम देनेवाले की अपनी ज़रूरतें और अपनी शर्तें हैं। ये शर्तें मुक्ति में बाधा डालती हैं। मैं अपनी हद तक इन शर्तों को बरदाश्त करता हूँ और जहाँ बरदाश्त नहीं कर पाता, छोड़कर आगे चल देता हूँ।

बार-बार नौकरी छोड़ना। बेकारी। भुखमरी। बीमारी। कर्ज़। तगाज़े। टूटन। इन सबसे बचने के लिए फिर नौकरी। नौकरी से बचने के लिए फिर···

मैं तरह-तरह के काम करता रहा हूँ—मनोवैज्ञानिक, भविष्यवक्ता, अनुभव-डिज़ाइनर। उन दिनों मैं एक अनुभव कार्पोरेशन में काम कर रहा था। 'अनुभव उद्योग' आज के सबसे बड़े उद्योगों में से एक है। समाज में 'चीज़ों' का महत्त्व घटता जा रहा है और 'अनुभव' का बढ़ता जा रहा है। चीज़ें आदमी की दैनिक आवश्यकताओं को पूरी कर सकती हैं, उसे थोड़ा-बहुत सुख भी दे सकती हैं लेकिन वे 'थ्रिल' नहीं दे सकतीं। और वास्तविक सुख तो थ्रिल में ही है। देश की आबादी के कुल एक-चौथाई लोग दिन में केवल तीन घण्टे काम करके पूरे देश की ज़रूरत की चीज़ों का उत्पादन कर देते हैं। बाकी लोग क्या करें ? और उत्पादन में लगे लोग भी अपने फ़ालतू समय का क्या करें ? इन सवालों का सिर्फ़ एक जवाब है—अनुभव। आबादी का एक बड़ा हिस्सा अनुभव के नये-से-नये तरीक़ों की खोज करने, उन तरीक़ों को अमल में लाने और फिर अनुभव प्राप्त करने में लगा रहता है।

मैं जिस अनुभव-कार्पोरेशन में काम कर रहा था, वह देश की सबसे बड़ी कार्पोरेशन में से एक है। तमाम छोटे-बड़े शहरों में उसके अनुभव-केन्द्र खुले हुए हैं और उनमें दिन-रात अनुभव बेचा जाना है।

इन केन्द्रों के अलावा कार्पोरेशन ने घने जंगलों [illegible] अनुभव-ग्राम बसाये हैं। शहर के शोर से ऊबे हुए लोग उन ग्रा[illegible] है और व[illegible]

'आदिम अनुभव' प्राप्त करते हैं !

एक अनुभव-डिजाइनर का काम है—नये-नये अनुभवों की कल्पना करना और फिर उन्हें अमल में लाने के लिए ब्ल्यू-प्रिण्ट तैयार करना। अपने पद को सँभालने के बाद मैं पूरी तन्मयता से अनुभव की दुनिया में उतर गया।

कुछ दिन बाद मैंने 'रोम के शहंशाह' की परियोजना बनायी। रोम की भवन-निर्माण कला के अनुसार एक विशाल महल बनाया गया और उसे तत्कालीन सज्जा के अनुरूप सजाया गया। इस महल में ही पूरा अनुभव घटित होना था।

मेहमानों को महल में दाखिल होने से पहले व्यक्तित्व परिवर्तन करने वाली दवा 'चेंजीन' का इस्तेमाल कराया जाता। इससे वे अपने वर्तमान को पूरी तरह भूल जाते और नये अनुभव को उसकी सम्पूर्णता में ग्रहण करने के लिए तैयार हो जाते। इसके बाद उन्हें विशेष रूप से इस अवसर के लिए तैयार की गयी रोम शहंशाहों की पोशाक पहनायी जाती। वे दरबारियों और मुसाहिबों के साथ महल में दाखिल होते तो शहंशाही अदब-क़ायदे से इस्तकबाल होता। गुलामों की कतारें झुकती चली जातीं।

सजी-धजी गैलरियों को पार करते हुए उन्हें शाही मयखाने में लाया जाता। साकी हाजिर होतीं। जाम छलकने लगते। दो हजार साल पुरानी शराब की महक पूरे माहौल पर छा जाती। रक्कासाएँ थिरकने लगतीं। एक-एक अदा पर लाल-ओ-गौहर लुटने लगते। जाम छलकते रहते, तब तक छलकते रहते, जब तक कि मेहमान नशे में पूरी तरह डूब न जाते !

इसके बाद खाने का दौर शुरू होता। रोम की सभ्यता के एक-से-एक उम्दा खाने। एक-से-एक लजीज गोश्त। इनमें इनसान का गोश्त सबसे उम्दा माना जाता।

खाने के बाद मेहमानों को बाहर बागीचे में लाया जाता। रविशों पर मखमली घास बिछी होती और उस पर ओस के नन्हें-नन्हें मोती जड़े होते। आस-पास खड़े रात की रानी के झाड़ पागल बना देनेवाली गन्ध बिखेर रहे होते। और उन झाड़ों से घिरा तालाब अतर से महक रहा होता।

धीरे-धीरे रात गहराती। नशे में डूबे शरीर पोशाकें उतारने लगते। तराशे गये नुकीले नारी शरीर और साथ ही धनपति पुरुषों के थुल-थुल शरीर। वे तमाम शरीर एक-एक कर तालाब में उतरते। तालाब का सोया हुआ जल कसमसाता। लहरें मचलतीं। शरीर एक-दूसरे को और खुद अपने

को भी भूल जाते। गोरी-गोरी मछलियाँ एक-दूसरी के पीछे तैरतीं। वे तैरती रहतीं, जब तक कि मजे टूटने न लगते। फिर नशा। तालाब में ही नशे का एक दौर और चलता। नशा रंग पर आता तो मछलियाँ एक-दूसरी से लिपट जातीं और एक और भी गहरे नशे में डूब जातीं।

और तब, अनुभव एक बहुत ही नाजुक मोड़ लेता। मेहमान और मेजबान तालाब से निकलकर फिर शाही पोशाक पहनते और शान से चलते हुए 'रोम के मैदान' में पहुँचते। यहाँ खाने समय के सबसे दिलचस्प खेल का इन्तजाम होता। मैदान के चारों तरफ गद्देदार कुर्सियाँ बिछी होतीं। मेहमान और उनके मुसाहिब अपनी-अपनी जगह ले लेते। वाद्ययन्त्रों पर [illegible]-युद्ध का संगीत उभरने लगता।

तभी अखाड़े में चमकीले रंग के दो गुलाम उतरते। दोनों के हाथों में छुरे चमचमा रहे होते। उस्ताद उन्हें इशारा देता और इशारे के साथ-साथ वे दोनों एक-दूसरे पर टूट पड़ते। ज़ोरदार वार करते। एक का छुरा दूसरे पर चलता तो उसके जिस्म की कोई चीज़ उतरकर दूर जा गिरती। खून का फव्वारा छूटता। दर्शकों में सनसनी दौड़ जाती। जिस पर वार किया जाता, वह क्रुद्ध होकर खूँख्वार ढंग से वार करता और दूसरे की पूरी-की-पूरी बोटियों को उड़ा देता। दोनों गुलाम पसीने और खून से पूरी तरह लथपथ हो जाते, फिर भी वे एक-दूसरे पर ज़ोरदार तरीके से वार करते रहते—करते रहते। तब तक करते रहते, जब तक कि उनमें से एक दूसरे की जान न ले लेता। उधर अखाड़े में गुलाम का बेजान शरीर लड़खड़ाकर गिरता, इधर पूरा मैदान तालियों की गड़गड़ाहट से भर जाता।

'रोम के शहंशाह' का उद्घाटन होते ही अनुभव की दुनिया में तहलका मच गया। उसके डिज़ाइनर के रूप में मेरा नाम रातों-रात प्रसिद्ध हो गया। बधाई के ढेरों तार आने लगे। मिलनेवालों का तांता लग गया। लोग दूर-दूर से मिलने के लिए आते लेकिन मैं मिलने से इनकार कर देता।

'रोम के शहंशाह' की कामयाबी के बाद मैं एक अजीब किस्म के अँधेरे में डूब गया। जितनी उसकी तारीफ़ हो रही थी, उतना ही मेरा अँधेरा बढ़ता जा रहा था। मुझे मालूम था कि यह ऐयाशी उन चन्द लोगों के लिए है, जिनके पास फालतू धन है। और फालतू धन कहाँ से आता है, यह मैं अच्छी तरह जानता हूँ। उन लोगों को शहंशाह होने का अनुभव कराने के लिए हर शाम कई लोगों की हत्या कर दी जाती। और इन हत्याओं के लिए मैं ज़िम्मेदार था!

मैंने शुरू में 'रोम के शहंशाह' का जो डिज़ाइन तैयार किया, उसमें किसी की हत्या नहीं होती थी।

डायरेक्टर ने डिजाइन को बहुत पसन्द किया लेकिन साथ ही कहा, र सब तो ठीक है लेकिन हत्या के विना नहीं चलेगा ! आप जानते हैं मारे मेहमान हमसे क्या उम्मीद करते हैं। नंगा सौन्दर्य, अजीबोगरीब का सैक्स, उत्तेजना, खतरा और हत्या ! हत्या के विना ऐसा कोई भी भव पूरा नहीं होता।"

मजबूर होकर मुझे हत्या को शामिल करना पड़ा। लेकिन हत्या के मिल होते ही मैं अनुभव के वाहर होता गया। मुझे हर समय लगता— हत्याओं के लिए मैं जिम्मेदार हूँ—मैं !

हत्यारा होने का एहसास आत्महत्या के लिए उत्तेजित करता। मैं वार-र अपने को कचोटता। कचोटते-कचोटते लहू-लुहान हो जाता। लेकिन वकुछ करने के वाद लगता—मैंने कुछ भी नहीं किया है !

आखिर एक दिन मैंने इस्तीफा लिखा और उसे डायरेक्टर के सामने ख दिया। डायरेक्टर ने इस्तीफे पर नजर मारी और मुझे ऐसे देखा, जैसे किसी भूत को देख रहा हो। उसने आश्चर्य से पूछा, "तुम पागल हो गये हो ?"

"जी !"

"मालूम है—कितनी वड़ी शोहरत तुम्हारे नाम के साथ जुड़ गयी है ! इस शोहरत को 'कैश' करके तुम अपार धन कमा सकते हो।"

"मालूम है।"

"तो फिर ?"

"मैं पागल हो गया हूँ !" कहकर मैं उठा और चुपचाप दफ्तर के बाहर आ गया।

फिर वही वेकारी। वही कर्ज। वही तकाजे। वही टूटन। टूटन से वचने के लिए फिर नौकरी ? नहीं, नौकरी स्वतन्त्रता की सबसे वड़ी शत्रु है। अब चाहे कुछ भी करना पड़े, नौकरी नहीं करूँगा। कतई नहीं करूँगा !

वेकारी एलाउंस से जो कुछ मिलता, उससे घर चल न पाता। न चल पाता तो कर्ज लेना पड़ता। कर्ज लौट न पाता तो तकाजे होते। तकाजे और अपमान। मैं अपमान को झेल न पाता और भीतर-ही-भीतर टूटता रहता। यह टूटन तब और वढ़ती जब उम्मीद न होते हुए भी फिर कर्ज माँगने जाना पड़ता। इनकार। एक इनकार आदमी को खा जाने के लिए काफी है। और मुझे तो रोज-रोज इनकार झेलने पड़ते।

कर्ज मिलना कतई वन्द हो गया था। तमाम दोस्त दुश्मन वन गये थे इतनी वड़ी दुनिया में मैं विल्कुल अकेला पड़ गया था। अकेला—अपने

गुफा में बन्द । न घर में मन टिक पाता, न ही बाहर । यूँ ही सड़क पर निकल जाता और बेमकसद भटकता रहता । कभी कोई दुश्मन दिखायी दे जाता तो मैं फुर्ती से रास्ता काटकर निकल जाता । कैसा चकमा दिया ! खुश होता । लेकिन तभी खाली घर का खयाल आ जाता और वह खुशी एकदम काफूर हो जाती ।

मैं अपने तमाम दोस्तों को खो चुका था । कहीं से भी कर्ज मिलने की गुंजाइश नहीं थी । मैं सिर्फ कर्ज लेने के लिए नये-नये दोस्त बनाता और देने का समय आता तो यह दोस्ती खुद-ब-खुद दुश्मनी में बदल जाती । शहर में मेरे दुश्मनों की तादाद बराबर बढ़ती जा रही थी ।

एक दिन पत्नी उदास थी । उदासी का कारण पूछने या कहने की कोई जरूरत न थी । मैंने कपड़े बदले और बाहर निकल गया । एक भी जगह ऐसी न बची थी, जहाँ से मैं आज के खर्च के लिए कुछ ला सकता । दोस्तों के कुप्रचार ने मेरे काम को बहुत मुश्किल बना दिया था ।

मुझे नहीं मालूम कि मैं कब और कैसे एक ऐसे कॉफी-हाउस में पहुँच गया, जहाँ मैं पहले कभी नहीं गया था । वहाँ मुझे कोई नहीं जानता था । कॉफी-हाउस काफी खुला-खुला लगा । मैं एक बड़ी मेज पर बैठ गया और वहाँ पहले से ही बैठे युवकों के साथ राजनीति पर बहस करने लगा । बहस करते हुए मेरी निगाह बराबर उन लोगों पर टिकी थी । उनमें से एक भोला-सा युवक बहुत गौर से मेरी बातें सुन रहा था । मैं जब-जब कोई जोरदार तर्क देता तो उसकी आँखों में चमक उभरती । यह वही युवक था जिसकी मुझे तलाश थी । बाकी लोगों की तरफ से ध्यान हटाकर मैं उसके साथ बातों में मशगूल हो गया । कुछ देर वैसी ही बेसिर-पैर की बातें होती रहीं, जैसी कि दोस्तों में अक्सर होती हैं ।

हम कॉफी-हाउस से निकले तो बहुत अच्छे दोस्त बन चुके थे । दोस्ती का तकाजा था कि हम दोनों में से कोई अगर किसी तरह की परेशानी में हो तो उसे बेतकल्लुफी से एक-दूसरे के सामने रख दे । मैंने ऐसा ही किया ।

उस प्यारे दोस्त ने फौरन दस डालर मेरे हाथ में थमा दिये ।

"धन्यवाद !" मैंने कोशिश के साथ मुस्कराकर कहा ।

"क्या मतलब ?" वह नाराज हो गया, "दोस्ती में भी 'धन्यवाद' दिया जाता है ?"

"तो मैं धन्यवाद वापस लेता हूँ," इस बार मैं सहज ढंग से मुस्कराया "अब तो आप खुश हैं ?"

"बहुत खुश !" उसने ठहाका लगाया ।

यह सब करते हुए मुझे बहुत ग्लानि हुई । लेकिन उससे बचने का कोई उपाय मेरे पास नहीं था ।

घर पहुँचा तो पत्नी इन्तजार में बैठी थी । मैं झुंझला उठा । वह इन्तजार क्यों कर रही है ? करने के लिए क्या और कुछ भी नहीं रह गया ?

मुझे मालूम है कि पत्नी इन्तजार करती हुई न मिलती तो भी मैं झुंझलाता---इस घर में मैं इतना फालतू हो गया हूँ ?

बेचारी पत्नी करे तो क्या करे ? और कुछ नहीं कर सकती, इसीलिए तो इन्तज़ार करती है ।

लेकिन इन्तजार किस चीज का ?"

खूबसूरती से छपे कागज़ के चन्द टुकड़ों का इन्तजार ?

नहीं, जब उन टुकड़ों का इन्तजार नहीं होता, तब भी पत्नी इन्तजार में बैठी मिलती है ।

तो फिर यह किसका इन्तजार है ? बार-बार चबाये गये प्रेम का इन्तजार ? प्रेम में दरार डाल देनेवाले विस्फोटक कलह का इन्तजार ? कलह को पाटनेवाली दयनीय खुशामद का इन्तजार ?

पत्नी प्यार नहीं करती, यह शिकायत मुझे नहीं है । बल्कि शिकायत है तो यही कि वह प्यार क्यों करती है ? कितना अच्छा होता कि वह मुझे प्यार न करती और मैं आसानी से छलाँग लगाकर उसे कूद जाता ।

लेकिन कूद कैसे जाता ? प्यार पत्नी ही तो नहीं करती, मैं भी तो करता हूँ । इसीलिए वह भी छलाँग नहीं लगा पाती ! अनचाहे प्यार और इन्तजार का कितना बोझ हमारे ऊपर लदा है । बरसों से हम इस बोझ को ढो रहे हैं । अब इस बोझ का अहसास भी हमें नहीं होता । या फिर अहसास हर समय बना रहता है और अहसास का अहसास ही मर गया है । यह मरा हुआ अहसास हमारे बीच अपरिचय की दीवार बनकर खड़ा है ।

हर रात जैसे-जैसे हमारे शरीर एक-दूसरे के पास आते हैं, वैसे ही अपरिचय की दीवार ऊपर उठती जाती है । धीरे-धीरे हम एक-दूसरे को बिल्कुल भूल जाते हैं और केवल शरीर को शरीर याद रह जाता है । कभी-कभी याद रहनेवाला शरीर किसी और का हो जाता है । बाँहों में कोई और कसा होता है और मस्तिष्क की शिराओं में कोई और !

यह कोई और कौन है ?

वह, जिसकी नजर में जहर भ[illegible] जो बार-बार डंक मारती है । आज भी वह डंक मारकर चली [illegible] बारूदी नजर से

देखा था और ठक-ठक करती चली गयी थी ! लड़की का एक-एक कदम मेरे माथे पर पड़ा था और मेरे भीतर गन्धक-सा कुछ सिघडने लगा !

गयी तो जाने दो । अरे ! घर है तो है। तेरे लिए क्या उसमें आग लगा दूं ?

लड़की डंक मारती है तो कैसी चुभन होती है ! फिर फौरन बाद चुभन नशे में बदलने लगती है । नशा धीरे-धीरे गहराता है और भीतर तक फैलता जाता है । स्नायुतोड़ नशा । रंगीन बेहोशी । बेहोशी टूटती है तो फिर वही दंश की भूख कुलबुलाने लगती है ।

यह कैसी भूख है ? प्यार की ? लेकिन प्यार तो पत्नी भी कम नहीं करती । पत्नी इतना प्यार करती है, फिर भी उन नाजुक क्षणों में वह लड़की क्यों हावी हो जाती है ? मैं उनमें से किसी के भी साथ नहीं, दोनों के बीच जी रहा हूँ । उन दोनों में क्या रिश्ता है ? मेरी एक ही भूख को भरने की आपसी प्रतिस्पर्धा का रिश्ता ? या अपनी-अपनी भूखों को भरने के लिए मुझे बाँट खाने का रिश्ता ? या फिर मेरी अलग-अलग भूखों को भरने और साथ ही अपनी-अपनी भूखों को भरने का रिश्ता ? ये अलग-अलग रिश्ते मिलकर एक कैसे बन जाते हैं ? और फिर कैसे वह रिश्ता अलग-अलग रिश्तों में बँट जाता है ? रिश्तों की यह पहचान ही हमें एक-दूसरे के निकट लाती है और पहचान झूठी पड़ने लगती है तो हम फिर एक-दूसरे से दूर होते चले जाते हैं ।

लड़की दूर चली जाती है तो लगने लगता है—वह फिर कभी लौटकर नहीं आयेगी । राहत मिलती है । चलो, एक बेहूदा कहानी हमेशा-हमेशा के लिए खत्म हो गयी । लेकिन कहानी इतनी आसानी से खत्म कहाँ हो पाती है ?

लड़की दूर जा सकती है, चली जाती है । लेकिन बेचारी पत्नी और मैं बेचारा पति —हम जब-जब दूर जाने की सोचते हैं, बच्चा जंजीर बनकर जकड़ लेता है । बच्चे से भी अधिक हमारा बासी प्यार ।

हमने शादी भी कैसे बेहूदा वक्त में की, जबकि पति-पत्नी की परख का कोई वैज्ञानिक उपकरण नहीं था । अब शादी करते तो कम्प्यूटर सबसे उपयुक्त पत्नी का कार्ड निकालकर सामने रख देता । लेकिन अब क्या हो सकता है ? अब तो हम पति-पत्नी हैं । और यह एक ऐसा कड़ुवा सच है, जैसा यह कि हम जिन्दा हैं ।

हमारी पूरी उम्र रिश्तों की जंजीरों में जकड़ी सिसक रही है और हम इस जकड़न को ही जिन्दगी समझ रहे हैं । क्या यही जिन्दगी है ? सिर्फ यही ? जिन्दगी सिर्फ यही नहीं है तो फिर क्या है ? क्यों है ? ...

लिए है ?

एक अन्धी दौड़ है। हमें नहीं मालूम कि कहाँ जाना है ? क्यों जाना है ? फिर भी हम दौड़ रहे हैं। बेमकसद दौड़े जा रहे हैं। कभी-कभी ठिठककर देखते हैं तो चौंक उठते हैं—अरे ! यह दुनिया कितनी सुन्दर है ! हमें इसके सौन्दर्य को देखने की भी फुरसत नहीं। प्राकृतिक सौन्दर्य और फिर मानव-निर्मित सौन्दर्य ! इस सौन्दर्य से गाढ़ा कोई और नशा है ? लेकिन यह नशा मेरे लिए क्या मायने रखता है ? यह सुन्दर दुनिया और इसकी तमाम नियामतें चन्द लोगों के लिए हैं। बाकी लोगों की तो छोटी-छोटी हसरतें भी कुँआरी रह जाती हैं। यह कुँआरापन कितनी कुण्ठाओं को जन्म देता है ! कुण्ठाएँ इस सभ्यता की जारज सन्तान हैं !

जारज सन्तान खुली सड़क पर नंगी नाच रही हैं और उसी सभ्यता को तोड़ रही हैं, जिसने कि उन्हें जन्म दिया है। सभ्यता के साथ-साथ वे समूचे सौन्दर्य को भी तोड़ रही हैं।

मेरी आँखें एक बार फिर पार्क की फेंस को कूदकर सड़क के पार जा बिछीं। वहाँ वही गहमागहमी है। उन्मुक्तता-दिवस का उत्सव पूरी तन्यमता के साथ चल रहा है। लोग अपने-अपने तरीके से अनुभव बटोर रहे हैं।

लोगों को देखकर मेरी भूख एक बार फिर भड़क उठी। पेट में जलन होने लगी और दिमाग की नसें चट-चट करने लगीं। यह भूख'''हरामजादी !

मुझे मालूम है कि बाजार में अब खाने का कोई भी सामान नहीं बचा है। और हो भी तो उसे पाने के लिए हड्डियाँ तुड़वाने की हिम्मत मुझमें नहीं रह गयी है।

खाना ? खाना तो घर बना पड़ा होगा और वह इन्तजार में बैठी होगी। बैठी होगी तो बैठी रहे। मैं उसके लिए क्या कर सकता हूँ। उसके लिए कुछ नहीं कर सकता तो बच्चे के लिए भी नहीं ? कितना प्यारा है वह, कितना नटखट ! पूछता है, "पापा, आपने हमें कहाँ से खरीदा था ?"

वह समझता है कि तमाम चीजें बेचे जाने और खरीदे जाने के लिए हैं। उसका पोषण जिस माहौल में हो रहा है, उसमें इतनी हलचल, इतनी उत्तेजना, इतना तनाव है कि किसी भी बात को सामान्य ढंग से सोचा ही नहीं जा सकता।

समय कितनी तेजी से भाग रहा है ! इन्सान का दिमाग कितनी तेजी से फैल रहा है ! बच्चे को पूरी शिक्षा कम्प्यूटर और टेलिस्क्रीन जैसी

मशीनों के माध्यम से दी जा रही है। वे ही उसके शिक्षक हैं। हाड़-मांस के शिक्षकों की पूरी नस्ल खत्म हो चुकी है।

पाँच साल के बच्चे के दिमाग में इतने सवाल भरे हैं कि उसके बाप के दिमाग में पाँच सौ साल तक भी नहीं आयेंगे। यह बच्चा आनेवाली शताब्दी का आदमी है और इसकी माँ—पिछली शताब्दी की। और इन दोनों के बीच में ? मुझे नहीं मालूम—मैं किस शताब्दी का हूँ !

पत्नी बच्चे को बहुत प्यार करती है। शायद मैं भी। जैसे-जैसे वह बड़ा हो रहा है, हम छोटे होते जा रहे हैं। उसकी जरूरतों के सामने हमारी जरूरतें पिछड़ती जा रही हैं। हमारे सपने उसके सपनों में बदल रहे हैं। हमारी तमाम सफलताएँ उसके लिए हैं और तमाम असफलताएँ खुद अपने लिए। हमने अपने वर्तमान को उसके भविष्य के हाथों में सौंप दिया है।

लेकिन इस सौंपने का क्या मतलब है, जबकि हम उसकी छोटी-से-छोटी आवश्यकताओं को भी पूरी नहीं कर पाते ? लम्बी बेकारी ने रीढ़ तोड़ दी है। यह नहीं कि मैं काम नहीं करना चाहता। लेकिन काम हो तब न !

अनुभव-कार्पोरेशन की नौकरी को छोड़े काफी दिन हो गये थे। मैं बुरी तरह घिर गया था। एक ही उपाय नजर आता—कोई स्वतन्त्र उद्योग। स्वतन्त्र उद्योगों की कई आकर्षक योजनाएँ मेरे दिमाग में थीं लेकिन उन योजनाओं को पूरी करने के लिए साधन नहीं थे।

स्वतन्त्र उद्योग खड़ा करने में मेरे सामने एक दिक्कत और थी। ऐसे उद्योग को चलाने के लिए दूसरे लोगों की जरूरत पड़ती। उन्हें मेरी शर्तों पर काम करना पड़ता, इस तरह मेरा स्वतन्त्र उद्योग दूसरों की परतन्त्रता का कारण बन जाता।

तो फिर ?

घूम-फिरकर मैं इस नतीजे पर आया कि कोई ऐसा धन्धा अपनाना चाहिए, जिसमें बहुत अधिक साधनों की आवश्यकता न हो और साथ ही किसी और की स्वतन्त्रता का हनन न करना पड़े। ऐसे कई धन्धे हो सकते थे। मैंने उनमें से वकालत को चुना।

दिन-रात मेहनत करके वकालत का इम्तहान पास किया। जोड़तोड़ करके लाइसेंस बनवाया और एक बार फिर कर्ज लेकर प्रैक्टिस शुरू कर दी। सोचा था—मैं अपने भीतर के 'कुछ' को प्रैक्टिस में लगाऊँगा तो जल्दी ही चमत्कारिक नतीजे सामने आयेंगे। उन नतीजों से मैं सारा कर्ज चुका दूँगा, पत्नी की तमाम शिकायतें दूर कर दूँगा और शान से रहना शुरू करूँगा। सबसे बड़ी बात होगी यह कि मैं हमेशा-हमेशा के लिए नौकरी

की गुलामी से छूट जाऊँगा।

नतीजे जितनी जल्दी आने की उम्मीद थी, उससे पहले ही आने शुरू हो गये। प्रैक्टिस शुरू करने के कुछ ही दिन बाद मुझे एक अजीब केस मिला।

एक गर्ल्ज़-हॉस्टेल की पांच लड़कियां आपस में बहुत 'इंटीमेट' थीं। वे साथ-साथ रहतीं और एक-दूसरी के साथ 'सोतीं'। उनके पास फालतू धन, फालतू चीजें और फालतू दोस्त थे। वे उन सबका इस्तेमाल करते-करते ऊब चुकी थीं। शराब, मारिजुआना, एल. एस. डी., मेथेड्रीन और हिरोइन भी उनकी ऊब को तोड़ न पातीं। वे कुछ ऐसा करना चाहती थीं, जिससे कि उनकी ऊब टूट सके—जिन्दगी में कुछ हलचल हो सके।

उस दिन पाँचों लड़कियों ने खूब नशा किया था। नशे का आखिरी दौर चल रहा था कि हॉस्टेल का एक बेयरा कमरे में आ गया। वह एक नीग्रो लड़का था। हालांकि ज्यादातर नीग्रो की तरह वह भी अब काले रंग में रहना पसन्द नहीं करता था। वह अक्सर लाल, पीले या हरे रंग में दिखायी देता।

उस दिन वह हरे रंग में था मगर अपने मोटे होंठों, ठुकी हुई नाक और सिर पर भेड़ की ऊन जैसे बालों के कारण दूर से ही पहचाना जाता। उसका पूरा शरीर कसा-तना था। ठोस। बाजुओं के मसल ऐसे, जैसे कि स्टील को उमेठ दिया गया हो। उसके चौड़े सीने पर घने बालों का छत्ता था और आँखों में जंगली भैंसा झाँकता।

लड़के ने जैसे ही कमरे में कदम रखा, सामने बैठी लड़की की नजर उस पर पड़ी। लड़की के नशे ने उछाल लिया और वह जंगली भैंसे में डूब गयी।

लड़की फुर्ती से उठी। उसने खटाक-से दरवाजा बन्द किया और 'इनलॉक' की चाबी घुमा दी। वह वापस लौटी तो आँखों में शैतानी चमक थी। उसने बल खाकर चुटकी बजायी, "आइडिया!"

बाकी लड़कियों ने चौंककर उसकी तरफ देखा।

वह लड़की आंखों को गोल-गोल घुमाकर बोली, "अभी मुझे एक जबरदस्त आइडिया आया है।"

"वह क्या?" एक ने पूछा।

"यह कि हम सब मिलकर इस लड़के के साथ 'रेप' करें!"

"गुड!" एक और लड़की ने ताली बजाकर समर्थन किया।

बाकी लड़कियां भी तुरन्त सहमत हो गयीं।

लड़का सहम गया। यह नहीं कि वे लड़कियाँ उसे अच्छी नहीं लगती थीं। लगती जरूर थीं लेकिन अपनी औकात से ज्यादा अच्छी !

लड़कियों ने उसे घेर लिया और वे उसके कपड़े नोचने लगीं।

"नो ! नो !! नो !!!" आइडियावाली लड़की ने उन्हें टोका, "अभी नहीं। पहले इसे 'ड्रिंक' कराओ।"

यह 'आइडिया' भी सबको पसन्द आया। एक लड़की फौरन पैग तैयार करने लगी।

पैग लड़के के सामने लाया गया तो उसने उसे शक की नजर से देखा।

जो लड़की पैग बनाकर लायी थी, उसने अपनी मांसल बाँह लड़के की गर्दन में डाल दी और पैग उसके होंठों से लगा दिया।

लड़का जैसे-तैसे गटक तो गया लेकिन उसकी दहशत और बढ़ गयी। शब्द 'रेप' उसके कानों में बज रहा था और उसके भीतर कोई मरता जा रहा था। पता नहीं ये मेरे साथ क्या करें ? कैसे करें ? रेप कैसे किया जाता है ? जब मैं कुछ करना ही नहीं चाहता तो ये मेरे साथ क्या कर सकती हैं ? नहीं, कर जरूर सकती हैं। मैं तो शराब भी नहीं पीना चाहता था !

तभी दूसरा पैग उसके सामने आ गया। फिर तीसरा। चौथा··· लड़कियाँ तब तक उसके भीतर उँडेलती रहीं, जब तक कि उसके शरीर ने पूरी तरह इनकार नहीं कर दिया।

लड़के के शरीर में शराब तैर रही थी लेकिन दिमाग अब भी दहशत के मारे घुसा जा रहा था।

लड़कियाँ अपने आपे में नहीं थीं। उनके भीतर नशा झनझना रहा था और यह नशा एक और भी तीखे नशे की माँग कर रहा था। उन्होंने लड़के को बिस्तर पर पटक दिया।

ये सब मेरे साथ क्या कर रही हैं ? क्यों कर रही हैं ? कहीं ऐसे भी किया जाता है ? इन्हें जो कुछ करना है, करें। मैं कुछ नहीं करूँगा। मैं इनके साथ नहीं मरूँगा ! कतई नहीं !

लड़कियों पर जनून सवार था। वे लड़के के अंग-अंग को कचोटने लगीं।

धीरे-धीरे लड़के में शराब और लड़कियाँ खिलने लगीं। शरीर गरमाने लगा और अंगों में हरकत होने लगी। फिर भी वह अपने से लड़ता रहा।

लड़कियों ने उसे और भी तेजी से मसलना शुरू कर दिया।

लड़का बराबर अपने से लड़ता रहा।

शराब और खिली तो वह कमजोर पड़ने लगा।

लड़कियाँ और भी मजबूत होती जा रही थीं।

कुछ देर बाद लड़का अपने से पूरी तरह हार गया और वह मरने के लिए तैयार हो गया।

वह तीन बार मर चुका तो और ज्यादा मरने की हिम्मत उसमें न रही। वह बिस्तर के एक कोने पर लाश की तरह लुढ़क गया।

इस बार आइडियावाली लड़की की बारी थी। उसने लड़के को झकझोरा लेकिन उसमें कोई हरकत नहीं हुई। दोबारा और जोर से झकझोरा, तब भी नहीं!

लड़की ने एक जोरदार तमाचा उसके मुँह पर जड़ दिया।

लड़का तिलमिलाकर उठा। गुस्सा तो बहुत आया। उठाकर नीचे फेंक दूँ हरामजादी को! लेकिन फिर भी अपनी औकात का खयाल आ गया। वह फिर बिस्तर पर लुढ़क गया।

लड़की पर वहशत सवार हो गयी। वह जंगली बिल्ली की तरह लड़के पर टूट पड़ी। उसके अंग-अंग को बुरी तरह नोचने लगी।

लड़के में फिर भी कोई हरकत नहीं हुई।

लड़की ने अचकचाकर उसके कन्धे पर दाँत गड़ा दिये।

लड़के ने उफ तक नहीं की।

लड़की को लगा—यह मेरी तौहीन है। और तौहीन मैं बरदाश्त नहीं कर सकती। उसके दिमाग में एक जहरीली गैस भर गयी। उसने लड़के के तीनों अंगों को मुट्ठी में भींच लिया और भींचती गयी। जहाँ तक ताकत थीं, वहीं तक भींचती गयी!

लड़के के मुँह से एक पैनी चीख निकल गयी। यह उसके जीवन की आखिरी चीख थी!

मुझे लड़कियों की तरफ से वकील किया गया।

केस बहुत साफ था। हॉस्टेल के दूसरे नौकर गवाह बन गये थे। किसी को भी उम्मीद न थी कि लड़कियों में से कोई भी बच पायेगी। उम्मीद तो मुझे भी न थी। इन्साफ का तकाजा भी यही था कि उन्हें सजा दी जाये!

लेकिन मैं एक वकील था। और वकील के लिए इन्साफ वही है, जो कि मवक्किल के हक में जाता हो।

मैंने लड़कियों को बचाने के लिए कानून को छानना शुरू किया। कानून सबका रक्षक है। जिसकी हत्या की जाती है उसका रक्षक है, और

जो हत्या करता है उसका भी !

मैंने मुकदमे के तथ्यों को पूरी तरह उलट दिया और एक बिल्कुल नयी 'स्टोरी' तैयार की। इस स्टोरी के अनुसार उस शाम बलात्कार की घटना हुई जरूर लेकिन बलात्कार लड़कियों ने नहीं, खुद नौकर ने उनके साथ किया था। उसने खुद नशा किया और लड़कियों को भी कराया। इसके बाद वह एक-एक कर लड़कियों के साथ बलात्कार करने लगा। तीन लड़कियों के साथ बलात्कार करने में तो वह कामयाब हो गया लेकिन चौथी की बारी आयी तो लड़की ने अपने को बचाने के लिए लड़के के अंगों को भींच दिया। लड़की की नीयत हत्या करने की नहीं थी। अपने को बचाने की कोशिश में उससे हत्या हो गयी !

गवाहों ने अपने बयानों में घटना का जो विवरण दिया था, उसके आधार पर मैंने कुछ ऐसे सवाल पूछे, जिनके जवाबों से सिद्ध हो गया कि बलात्कार की चेष्टा लड़के की तरफ से ही की गयी थी। गवाहों की जिरह में उलझाकर मैंने यह भी सिद्ध कर दिया कि मरनेवाले में यौन-आक्रामकता की प्रवृत्ति पहले से ही मौजूद थी।

इन 'तथ्यों' के आधार पर अदालत ने लड़कियों को साफ बरी कर दिया।

इसके बाद मेरे पास मवक्किलों का ताँता लग गया। लेकिन अब मैं कोई और केस लड़ने के लिए तैयार न था। इस केस को जीतकर मैं हमेशा-हमेशा के लिए हार गया था। अपने पक्ष में फैसला सुनने के बाद मुझे बराबर लगता रहा—इस बलात्कार और हत्या में मैं भी शरीक हूँ !

इस स्वतन्त्र पेशे में स्वतन्त्रता के मार्ग की और भी बाधाएँ थीं। पहली बाधा थे वे लोग जो बलात्कार या हत्या करके उसके दण्ड से बचना चाहते थे और दूसरी ज्यादा बड़ी बाधा था स्वयं कानून। कानून, जो सबकी रक्षा करता है।

मैंने इन्साफ की रक्षा के लिए इस महान पेशे को छोड़ दिया और फिर सड़क पर आ गया।

अब मुझे और भी विकट लड़ाई लड़नी थी। कर्ज का बोझ और बढ़ गया था और तमाम रास्ते बन्द हो गये थे। इतनी बड़ी दुनिया में क्या कहीं भी रास्ता नहीं है ? कहीं भी ?

पूरी दुनिया एक विराट मशीन है और आदमी इस मशीन का एक मामूली पुर्जा बनकर रह गया है। वह मशीन के साथ फिट होकर ही चल सकता है। इस मशीन ने बहुत-से इनसानी पुर्जों को बेकार और फालतू बना

दिया है।

मशीनीकरण से पूरी दुनिया का चेहरा बदल गया है। मैं जिस शहर में रहता हूँ, उसने एक ही साल में अपनी शक्ल बदल ली है। वह मुझे कतई 'अपना' नहीं लगता। जिस मकान में रहता हूँ, वह भी अपना नहीं लगता। और उसमें रहनेवाले लोग—वे अपने लगकर भी नहीं लगते।

मैं फायरप्रूफ प्लास्टिक से बने जिस फ्लैट में रहता हूँ, वह इतना हल्का है कि मैं चाहूँ तो पूरे के पूरे फ्लैट को समेटकर, खुद उठाकर ले जा सकता हूँ। फ्लैट ही क्या, आज सभी चीजें हल्की हो गयी हैं। समुद्री वनस्पति से बना भोजन इतना हल्का कि आप उसे एक मिनट में 'पी' सकते हैं, कपड़े इतने हल्के कि उन्हें पहनकर यह अहसास ही नहीं होता कि कुछ पहना है। इन कपड़ों को एक बार इस्तेमाल करके फेंक दिया जाता है। हर चीज को इसी तरह फेंक दिया जाता है।

अब चीजों का गुण मजबूत और टिकाऊ होना नहीं, नया और जल्दी-से-जल्दी खत्म होने में सक्षम होना है। वे जल्दी-जल्दी खत्म नहीं होंगी तो नयी चीजें खपेंगी कहाँ? कारखानों को बराबर चालू रखने के लिए जरूरी है कि आकर्षक, सस्ती और न टिकनेवाली चीजें बनायी जायें। ऐसी चीजों से बाजार अटे पड़े हैं।

लेकिन मेरे लिए वे तमाम चीजें क्या मायने रखती हैं, जिन्हें कि मैं खरीद नहीं सकता?

मेरा पहला बच्चा बीमार हो गया था। मुझे नहीं मालूम, उसे क्या बीमारी थी। उसकी आवाज बन्द हो गयी थी और दायाँ हाथ हर समय हिलता रहता। गोया जीने से इनकार कर रहा हो।

मैं बेकार था और ऊपर से मोटा कर्ज लदा था। कहीं से कुछ भी मिलने की उम्मीद न थी। फिर भी मैंने कोशिश की। लेकिन बेकार।

मैं बच्चे का इलाज नहीं करा सका। तमाम दवाओं के होते भी उसने मेरी आँखों के सामने तड़प-तड़पकर दम तोड़ दिया।

रह-रहकर खयाल आता कि मैं बच्चे का इलाज करा सकता तो शायद वह बच जाता। उसे रोग ने नहीं, मेरी बेबसी ने मारा है। मेरे निकम्मेपन ने मारा है!

मैं रोज अपने बच्चे को मारता हूँ, पत्नी को मारता हूँ और अपने खुद को मारता हूँ!

मैं आज भी वही सड़ी हुई जिन्दगी जी रहा हूँ, जो कि पिछली शताब्दी में मेरे पुरखे जीते थे। मेरे लिए शताब्दी कहाँ बदली है?

मेरे लिए तो नहीं बदली लेकिन 'उस' के लिए? वह दो सौ मंजिल के रॉकों में अकेला रहता है और पूरी तरह मशीनी जिन्दगी जीता है। उसके लिए शताब्दी न सिर्फ बदल गयी है, बल्कि कई शताब्दी आगे कूद गयी है!

वह भविष्य में जीता है और पूरी दुनिया के भविष्य को काला कर रहा है। पता नहीं वह काला भविष्य कैसा हो? हो भी या नहीं? जहां रोज अणु-बम, कीटाणु-बम और स्पेस-बम बनाये जा रहे हों, वहां भविष्य के बारे में क्या कहा जा सकता है! बनानेवाले जानते हैं कि उन बमों के कारण खुद उनका भविष्य भी खतरे में पड़ गया है। फिर भी वे उन्हें क्यों बना रहे हैं?

बना रहे हैं अपनी शोणित-स्पृहा को शान्त करने के लिए। आज का सत्ताधारी हिंस्र हो उठता है। अपनी हिंस्र-वृत्ति को शान्त करने के लिए उसने विज्ञान को विध्वंसक बना दिया है। इस युग की वैज्ञानिक उपलब्धियां मनुष्य के हित के लिए उतनी नहीं, जितनी कि उसके विनाश के लिए हैं। पूरी दुनिया में बारूद की सुरंगें बिछी हैं। पता नहीं—कब, कहां विस्फोट हो जाये! हो सकता है—जहां मैं बैठा हूं, अभी यहां विस्फोट हो जाये और मेरी हड्डियों का कचरा दूर-दूर तक बिखर जाये।

मैंने अपने चारों तरफ शक की नजर से देखा। वहां तुरन्त विस्फोट होने की कोई आशंका दिखायी नहीं दी।

आशंका तो है। हर समय है। इनसान ने ये तमाम बम प्रदर्शनी में रखने के लिए नहीं बनाये।

आखिर इनसान को हो क्या गया है! वह अपनी पूरी योग्यता, पूरी क्षमता और पूरे साहस से खुद अपने विनाश के साधन जुटाने में लगा है!

क्यों लगा है?

अपना प्रभाव बढ़ाने के लिए—अपनी सत्ता मनवाने के लिए?

यह सत्ता का मोह ही तो खून की प्यास बढ़ाता है। बड़े-बड़े कारखानों में लगी मशीनें हर समय लाल खून को काले सोने में बदलती रहती हैं। फिर वह काला सोना नये-नये कारखानों की शक्ल में बदल जाता है, इलेक्ट्रानिक जासूसी की शक्ल में पूरी दुनिया में फैल जाता है, दो सौ मंजिल ऊंचे रॉकों की शक्ल में आकाश को चीरता चला जाता है और अन्त में मंगल ग्रह पर इनाम लगा देता है। यह काला सोना लाखों लोगों की हत्याएं करा देता है और बचे-खुचे लोगों की उन्मुक्तता को छीनने के लिए उन्मुक्तता-दिवस का आयोजन करता है।

बाहर सड़क पर उन्मुक्तता-दिवस का उत्सव पूरी सरगर्मी के साथ चल रहा है। लूट, हत्या और बलात्कार! इनसान अपने बनाये सबकुछ को नष्ट

करने पर तुला है। उसे समझा दिया गया है कि नष्ट करने का अपना सुख है। वह अपनी पूरी सामर्थ्य से इस सुख को बटोरने में लगा है!

आखिर इस उन्मुक्तता-दिवस का मतलब क्या है? मुक्ति यही है? यह नहीं है तो फिर क्या है? मुक्ति के रूप में हम चाहते क्या हैं?

जीवन की तमाम विषमताओं से मुक्ति—एक दिन की नहीं, सम्पूर्ण और सदा की मुक्ति!

जीवन के रहते यह मुक्ति सम्भव है?

सम्भव है तो जीवन के रहते और जीवन के लिए ही। जीवन की समाप्ति यानि मृत्यु तो मुक्ति नहीं, विराम है।

कैसी विडम्बना है कि मैं आज के दिन भी मुक्त नहीं हो सकूंगा—अपने को नहीं जान सकूंगा। कानून और भीड़ ने ही तो बन्धन उठा लिये हैं, मैं तो अपने ऊपर से बन्धन नहीं उठा सका।

मैं बन्धन उठा भी लूं तो उससे क्या होता है? 'उस' का बन्धन तो बराबर कसता जा रहा है।

क्या तमाशा है! वह तो अपना खेल खेल रहा है और लोग मोहरे बने हुए हैं।

अचानक मुझे अपने सामने आकाश में कुछ कांपता हुआ लगा। तभी वे दोनों भयानक आँखें उभर आयीं और मुझे बेरहमी से घूरने लगीं। वे घूरती रहीं और मैं भीतर तक फ्यूज होता चला गया। लगा—यह शरीर, यह दिमाग, यह चेतना—कुछ भी मेरा नहीं है। मैं वहां हूं ही नहीं। कोई और है, जो आँखों के उस बरमे को झेल रहा है!

सबकुछ फ्यूज हो जाता है तो भी यह कोई कैसे बच रहता है? यह कोई ही जीवनी-शक्ति है। वह शक्ति, जो मौत से कभी नहीं हारी।

वे आँखें गायब हो गयीं तो जमा हुआ रक्त फिर पिघलने लगा। मैं धीरे-धीरे फिर अपने में लौटा।

उन्मुक्तता-दिवस समारोह उसी तन्मयता के साथ चल रहा है। मेरे पेट में फिर कुलबुलाहट हो रही है। आँतें सिघड़ रही हैं। सिर भारी है। कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा। पेट भरा हो तो कुछ भी अच्छा लग सकता है। उन्मुक्तता-दिवस भी। लेकिन जहां भूख की कैंची चल रही हो, वहां सबकुछ कट जाता है।

शायद बाजार में कहीं खाने को कुछ मिल ही जाये—यह खयाल आते ही पैरों में थोड़ी जान महसूस हुई। मैं उठा और भारी कदमों से सड़क पर आ गया।

सूरज आकाश में ठीक सिर के ऊपर आकर ठहर गया है। परछाइयाँ पैरों से सिमट गयी है। क्या परछाई है! सिर्फ एक बदशक्ल धब्बा। मेरा पूरा व्यक्तित्व सिमटकर ऐसा ही धब्बा नहीं रह गया है?

मैं परछाई को धकेलता आगे बढ़ा। कुछ लोग [illegible] रहे थे। मैंने ललचायी नजर से देखा। जिस दुकान में [illegible], उसका दरवाजा टूटा हुआ था और फलों की पेटियाँ खुली पड़ी थीं। लोग पागलों की तरह छीन-झपट कर रहे थे। भूख [illegible]।

मैं फुर्ती से दुकान में घुसा और इधर-उधर से फल बटोरने लगा। तभी खयाल आया—पता नहीं शाम को और फिर कल कहीं भी कुछ खाने को मिले न मिले। क्यों न थोड़े से फल छुपाकर रख लिये जायें!

मैंने एक बड़ी-सी पेटी में तमाम अच्छे-अच्छे फल भरने शुरू कर दिये। फल मुफ्त के न होते तो मैं किसी भी हालत में पेटी को न उठा पाता। जैसे-तैसे उठायी और उसे अपने दिमाग पर लादकर दुकान से बाहर हो गया।

बाहर खड़े लोग हँसने लगे। मुश्किल से दो-चार कदम उठाये होंगे कि पीछे से किसी ने जोर का धक्का दिया। मैं मुँह के बल गिरा। तमाम फल बिखर गये। पीछे से ठहाके की आवाज आयी। वे कई लोग थे। उन्होंने फुर्ती से तमाम फल बीन लिये।

मैं घुटने पकड़कर उठा और धीरे-धीरे रेंगने लगा। जिस्म के मारे घुटने चरमरा उठे। लगा—आगे बढ़ा तो इस बार बिना धक्का खाये ही गिर जाऊँगा। मैं पटरी पर एक तरफ बैठ गया और उत्सव का रंग देखने लगा।

लेकिन रंग, वह कहाँ गया? जोड़े, जो कुछ देर पहले जोड़े थे, अब उदास, लटके हुए चेहरे बन गये हैं। सुबह सात बजे यह खेल शुरू हुआ था और दो बजते-बजते खत्म हो गया। सात घण्टे—सिर्फ सात घण्टे

सारी दुनिया को नपुंसक बना देने के लिए काफी हैं। आयें वे, जो सारी उम्र आहें भरते हैं, चाँद-सितारों से बातें करते हैं, दूध की नहर खोद लाने का दावा करते हैं ! वे आयें और एक बार, दो बार, तीन बार···तीन हजार बार मरें। देखें, वे कितनी बार मर सकते हैं !

जिसको जितनी बार मरना था, मर चुका है। और अब पूरा शहर जिन्दा यानि उदास है।

मैं पटरी के एक किनारे बैठा था कि अचानक सामने से डॉक्टर गुजरा। आज उसके हाथ में विजिटिंग बैग नहीं था। अजीब लगा। वह काला बैग उसके व्यक्तित्व का एक जरूरी हिस्सा बन चुका है।

"हैलो, डॉक्टर !" मैंने ऊँचे स्वर में पुकारा तो वह वापस मुड़ा।

मैं चकित रह गया। डॉक्टर की खास पहचान—वह खिलखिलाहट—गायब थी और उसका चेहरा ईसा मसीह की तरह लटका हुआ था।

मैं एकदम तय नहीं कर सका कि उससे क्या पूछूं।

तभी डॉक्टर भर्राये हुए स्वर में बोला, "तुम मेरा एक काम कर सकते हो ?"

"बोलो !"

"तुम मेरी हत्या कर दो !"

"क्या मतलब ?"

"मुश्किल यह है कि कोई मतलब ही तो नहीं है। कुछ भी मतलब होता तो मैं तुमसे यह कहता ?"

"फिर भी···"

"फिर भी क्या ? मैंने कभी भी तुम्हें किसी काम के लिए नहीं कहा। आज पहली बार एक काम के लिए कह रहा हूं। तुम यह काम कर दो तो मेरे ऊपर बड़ा अहसान हो।"

मैं एकदम सकते की हालत में आ गया। पूछा, "ऐसे नहीं डॉक्टर, तुम साफ-साफ बताओ, आखिर हुआ क्या है ?"

"कुछ भी तो नहीं !" डॉक्टर ने शब्दों को चबा डाला, "आज भी कुछ नहीं हुआ। कुछ हो जाता तो मैं तुम्हें तकलीफ न देता। बोलो, तुम मेरा काम करने के लिए तैयार हो ?"

डॉक्टर सचमुच इन्तजार में खड़ा है और मैं नहीं समझ पा रहा कि उसे क्या जवाब दूं !

"मुझे मालूम था कि तुम मेरा काम नहीं कर सकोगे !" डॉक्टर ने मेरी तरफ हाथ बढ़ाया, "अच्छा, तो मैं चला।"

मैंने उसका हाथ पकड़कर खींच लिया और उसे पटरी पर अपने बराबर बैठा लिया, "डॉक्टर, सच-सच बताओ—मामला है क्या ?"

"तुम मुझसे बात मत करो।" उसने सख्ती से कहा और पथरायी आँखों से सड़क को घूरने लगा।

मैंने आज से पहले कभी डॉक्टर को उदास नहीं देखा था। वह हर समय ठहाके लगाता रहता। लगता—वह सिर्फ हँसने और हँसाने के लिए पैदा हुआ है। डॉक्टर से पहली मुलाकात एक दोस्त के यहाँ हुई थी। वह औसत कद और भरे हुए जिस्म का आदमी था। उसका चौड़ा चेहरा, दूसरे चेहरों से बहुत भिन्न था। ठुकी-ठुकी नाक। एकदम गोल आँखें। एक हिसाब से उसे बदसूरत कहा जा सकता था लेकिन उसके चेहरे पर हर समय ऐसी हँसी खेलती रहती कि वह देखने में अच्छा लगता।

उन दिनों वह उस दोस्त की पत्नी का इलाज कर रहा था। मरीज के पूरे शरीर में एक अपरिचित दर्द समा गया था। हर समय शरीर टूटता रहता। मेडिकल चैकअप में रोग का कोई लक्षण नहीं था। फिर भी वह बीमार थी। असल में बीमारी उसके शरीर में नहीं, उस माहौल में थी, जिसमें कि वह जी रही थी।

डॉक्टर ने दवाओं के साथ-साथ ठहाकों का टॉनिक देना शुरू किया तो वह खिलती चली आयी।

पहली मुलाकात में ही डॉक्टर से मेरी अच्छी दोस्ती हो गयी। उसी दिन उसने मेरा नाम 'शैतान' रख दिया। मैंने आग्रह किया कि किसी दिन वह मेरे घर आये।

अगले ही दिन डॉक्टर मेरे यहाँ आ धमका। वहाँ भी उसके ठहाके गूँजने शुरू हो गये। दूसरे-तीसरे दिन वह आता और घण्टों हम सबको हँसाता रहता। वह मेरा ही नहीं, मेरी पत्नी और बच्चे का भी उतना ही अच्छा दोस्त बन गया।

एक दिन उसने हम सबको अपने घर बुलाया।

वह एक छोटा-सा लेकिन बहुत ही खूबसूरत घर था। खिलौने-जैसा। उसमें रहनेवाले तमाम लोग बहुत धीरे-से बोलते और अपने मेहमानों का खास खयाल रखते।

एक दिन फिर हम डॉक्टर से मिलने गये तो बातों-बातों में पता चला कि वह घर डॉक्टर का नहीं है। बारह साल पहले वह उस घर में 'पेइंग-गेस्ट' बनकर आया था। थोड़े ही समय में वह परिवार के सभी सदस्यों से घुलमिल गया और परिवार का एक अंग बन गया।

रोज सुबह नाश्ते के बाद वह अपना विजिटिंग बैग उठाकर निकल

जाता है। पूरे शहर में उसके मित्र-परिवार फैले हैं और वह उन तमाम परिवारों का मित्र-डॉक्टर है। अपनी 'रोमिंग-प्रेक्टिस' से वह जो कुछ कमाता है, उसे निजी खर्च के अलावा मित्र-परिवारों को भेंट देने और अपने मरीजों के लिए दवाएँ तथा फल जुटाने में खर्च कर देता है।

डॉक्टर एक दर्जन से अधिक भाषाएँ जानता है और किसी भी नस्ल के आदमी को पहली मुलाकात में ही दोस्त बना लेने के फन में माहिर है। वह जिससे भी मिलता है, उसे ही लगता है कि डॉक्टर से बड़ा उसका हमदर्द कोई नहीं। वह सबके दुख-सुख में हिस्सा लेता है लेकिन अपने दुख या सुख में किसी को हिस्सेदार नहीं बनाता। हिस्सेदार बनाता है सिर्फ ठहाकों में! उसके पास बेशुमार लतीफे और जिन्दा किस्से हैं। वह एक परिवार के किस्से दूसरे को और दूसरे के तीसरे को सुनाता रहता है। वे सभी परिवार उसे हँसानेवाले डॉक्टर के रूप में जानते हैं।

एक दिन फिर मुझे यह जानकर आश्चर्य हुआ कि डॉक्टर जिस परिवार में बारह साल से रह रहा है, उस परिवार के लोग भी उसका नाम नहीं जानते। कोई नाम कभी रहा तो जरूर होगा लेकिन अब तो सभी के लिए उसका नाम 'डॉक्टर' है। सिर्फ डॉक्टर नहीं, हँसानेवाला डॉक्टर!

वही हँसानेवाला डॉक्टर आज काँसे की मूर्ति बना पटरी पर मेरे बराबर बैठा है। मैं उसे हिलाना चाहता हूँ लेकिन वह हिलने को तैयार नहीं।

मैंने डॉक्टर को अपनी बाँह में कसते हुए कहा, "देखो डॉक्टर, दुनिया में कोई भी दुख ऐसा नहीं, जिसका अन्त न हो।"

"मैं अन्त की तलाश में ही तो निकला हूँ!" डॉक्टर उत्तेजित हो उठा, "बोलो, तुम मुझे वह अन्त दे सकते हो?"

"लेकिन अन्त सिर्फ एक वही तो नहीं, डॉक्टर!" मैंने उसे और भी जोर से भींचते हुए कहा, "दुखों के अन्त यहाँ भी हैं। जरूरत सिर्फ इस बात की है कि हम अकेले घुटकर न रह जायें। तुम बोलो, कम-से-कम मेरे सामने तो बोलो!"

"अब क्या बोलूं?"

"बोलो, मैं सबकुछ सुनना चाहता हूँ। खुलकर बताओ, आखिर हुआ क्या?"

"आज कुछ नहीं हुआ," डॉक्टर हिल गया, "जो कुछ हुआ, एक अरसे पहले हुआ था।"

"वह क्या?"

"उन दिनों मैं एक काउंटी अस्पताल में मेडिकल सुपरिण्टेण्डेण्ट था।

अकेला था। दो लड़कियाँ मेरे जीवन में आ चुकी थी। दोनों से शादियाँ भी कीं लेकिन कोई भी निभ नहीं सकी। अब मैं किसी और झमेले में पड़ने को तैयार नहीं था। उन्हीं दिनों उससे मेरा परिचय हो गया।"

"कौन थी वह ?"

"अब तुम कुछ मत पूछो। मुझे बोलने दो।" डॉक्टर फूट पड़ा, "वह एक खूबसूरत लड़की थी। तुम खूबसूरती का मतलब समझते हो न ! नहीं, तुम नहीं समझ सकते। इतनी खूबसूरत लड़की मैंने जिन्दगी में और कोई नहीं देखी। मैं आज तक नहीं समझ सका, उसने मुझे कैसे पसन्द कर लिया था ! यह पसन्द का मामला बड़ा नाजुक है। वह कहती थी—मैं उसे बहुत खूबसूरत लगता हूँ। खूबसूरत और मैं ? अब तुम ही देख लो ! वह कहती थी—और कोई इस तरह नहीं मुस्कराता। और न ही कोई इस तरह बातें करता है !"

"बातें तो तुम सचमुच बहुत प्यारी करते हो।"

"हाँ, करता हूँ लेकिन अब तुम बोलो मत।" डॉक्टर ने एक लम्बी साँस ली, "मैंने उसे बहुत मना किया लेकिन वह नहीं मानी। आखिर एक दिन हमने शादी कर ली। शादी और फिर दो बच्चे। कितने प्यारे बच्चे थे वे। उनकी एक-एक बात···लेकिन छोड़ो ! मैं और ज्यादा बरदाश्त नहीं कर सकूँगा।"

"नहीं, डॉक्टर, नहीं ! तुम बोलो। मैं सबकुछ सुनूँगा। सबकुछ।"

"क्या बोलूँ अब ?" डॉक्टर के चेहरे का रंग तेजी से बदला, "पाँच साल का वह समय एक सुन्दर सपना था। वैसा ही सुन्दर, जैसी कि वह खुद थी। लेकिन सपने तो टूटने के लिए होते हैं।"

"फिर क्या हुआ ?"

"एक दिन वह सपना टूट गया।"

"कैसे ?"

"यह मत पूछो। यह मत पूछो तुम।"

"नहीं, तुम्हें बताना ही होगा।"

डॉक्टर ने अपने को समेटने की कोशिश की, "मेरा एक पड़ोसी था। और पड़ोसी एक खतरनाक जीव होता है। वह कितना खतरनाक होता है, तुम जानते हो ? नहीं, तुम कुछ नहीं जानते।" कहकर वह फिर पहले की तरह गुम हो गया।

मैंने उसे कुरेदा, "हाँ, तो फिर ?"

"फिर मैं वहाँ नहीं रह सकता था। एक मिनट भी नहीं रह सकता था। सबकुछ छोड़कर या उस सबसे छूटकर यहाँ चला आया।"

"फिर ?"

"फिर तुम जानते ही हो।"

"लेकिन आज क्या हुआ ?"

"आज वह सब हो गया, जिसकी मैंने कल्पना भी न की थी।"

"वह क्या ?"

"मेरा खयाल था कि हँसने की आदत ने मुझे बचा लिया है। इन लम्बे वर्षों को मैंने हँसते-हँसते काट दिया है और बाकी जिन्दगी को भी इसी तरह काट दूंगा। लेकिन आज, पहली बार लगा कि मैं हँसते-हँसते थक गया हूँ। अब और नहीं हँस सकूंगा।"

"हँस क्यों नहीं सकोगे ! अभी तो तुम्हें बहुत दिन जीना है। और जीना है तो हँसना ही होगा।"

"शैतान !" डॉक्टर ने शरारत से मुसकराकर कहा, "तुम मुझे फिर वहीं घसीटना चाहते हो !"

"चाहता नहीं, घसीट लिया है।"

"मुझे मालूम था कि तुम यही करोगे।" कहते-कहते डॉक्टर के पथरीले होंठों पर फिर वही मुस्कान लौट आयी।

कुछ देर हम वहीं बैठे उन्मुक्तता-दिवस समारोह देखते रहे।

अचानक डॉक्टर उठा, जैसे कोई जरूरी काम याद आया हो। बोला, "मेरे एक मरीज की हालत बहुत नाजुक है। उसे अभी देखना होगा।" उसने जल्दी-जल्दी मुझसे हाथ मिलाया और उसी रास्ते पर लौट गया, जिससे कि आया था।

डॉक्टर के चले जाने के बाद मैं भी उठा और धीरे-धीरे आगे बढ़ने लगा।

शहर के मुख्य चौराहे पर भीड़ जमा है। जिस जगह कभी ट्रैफिक पुलिस कान्स्टेबल खड़ा हुआ करता था, आज वहाँ फाँसी खड़ी की गयी है और फांसी के तख्ते पर देश के सर्वोच्च न्यायाधीश खड़े हैं। लोग हैरत से उन्हें देख रहे हैं।

कोई कहता है, "हद हो गयी साहब, कैसा वक्त आ गया। जिसके हुक्म से कल तक अपराधियों को फाँसी दी जाती थी, आज उसी को फाँसी पर चढ़ाया जा रहा है !"

"चढ़ाया नहीं जा रहा," यह न्यायाधीश की आवाज है, "मैंने अपनी अदालत से खुद अपने को फाँसी की सजा दी है। मैंने जो अपराध किये हैं, उन्हें देखते हुए यह सजा बहुत कम है। मुझे अफसोस है कि इससे बड़ी सजा मैं अपने को नहीं दे सकता !

"एक तरफ तो बरसों से बहस चल रही है कि फाँसी की सजा न्याय-संगत है या नहीं और दूसरी तरफ मैं 'मौत के बदले मौत' के न्याय के अनुसार एक के बाद एक हजारों लोगों को फाँसी देता गया हूँ। अगर बहस करनेवाले कल फैसला कर देते हैं कि फाँसी की सजा न्याय-संगत नहीं है—मनुष्य को मनुष्य की जान लेने का अधिकार नहीं है, तो इतने वर्षों तक मैंने जो फाँसी की सजाएँ दी हैं, वे हत्याएँ नहीं बन जायेंगी? उन हत्याओं का अपराध किसके सिर होगा?

"मुझे सिखाया गया था कि किसी के द्वारा किसी दूसरे की जान ले लेना साबित हो जाता है (बेशक उसने जान न ली हो!) तो कानून का कर्तव्य है कि उसकी जान ले ले! लेकिन मुझे यह किसी ने नहीं सिखाया कि कोई किसी की जान क्यों लेता है? उसके ऊपर कौन-सा दबाव और कौन-सी मजबूरी होती है? वह दबाव और वह मजबूरी फाँसी की मुस्तहिक क्यों नहीं है? किसी ने मुझे यह भी नहीं सिखाया कि जान लेनेवाला खुद जान लेता है या वह जान लेने का यन्त्र बनता है! मैं भी तो इतने वर्षों तक जान लेने का यन्त्र बना रहा हूँ। फाँसी का हुक्म देने की सजा में मुझे भी फाँसी पर लटकाया जाना चाहिए था। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। जिस न्याय के अनुसार सेना हत्या करके भी हत्यारी नहीं, देशभक्त कहलाती है, उसी न्याय के अनुसार मैं भी हत्यारा नहीं, न्यायमूर्ति बना रहा। लेकिन आज मैं न्यायमूर्ति नहीं, हत्यारा हूँ!

"आज मेरी पूरी शिक्षा बेकार हो गयी है और मैं नये सिरे से न्याय का पाठ पढ़ने की कोशिश कर रहा हूँ। मैंने अपने अपराधों की मिसल कानून की अदालत से उठाकर वास्तविक न्याय की अदालत को सौंप दी है। और इस अदालत का फैसला है कि हजारों हत्याओं के अपराधी को बन्द कोठरी में नहीं, शहर के खुले चौराहे पर फाँसी दी जाये!" कहकर सर्वोच्च न्यायाधीश ने फाँसी का फन्दा अपने गले में डाला और झटके के साथ झूल गया।

धीरे-धीरे उसकी गर्दन लम्बी होने लगी, आँखें फटने लगीं और काँटेदार जबान मुँह के बाहर निकल आयी।

काठ के चेहरोंवाले लोग फाँसी पर लटके न्यायाधीश के दर्शन कर रहे थे, तभी काले कोटवाला एक तेज-तर्रार आदमी भीड़ में से निकला और कुछ देर पहले जिस तख्ते पर न्यायाधीश खड़ा था, उस पर आकर खड़ा हो गया।

उसने आते ही प्रभावशाली ढंग से बोलना शुरू किया, "माननीय

न्यायाधीश ने जिस अपराध में अपने को फांसी पर लटकाया है, वही अपराध मेरा भी है। कहा जाता है कि न्याय और अन्याय को अलग-अलग छान देनेवाली छलनी कानून है। इस छलनी में कुछ सूराख ऐसे भी हैं, जिनमें से न्याय के साथ अन्याय और अन्याय के साथ न्याय छन जाता है। मैं जिन्दगी-भर उन धोखेबाज सूराखों को पहचानने और चालाकी के साथ उनका इस्तेमाल करने में लगा रहा हूं। कानून की भाषा में सच सिर्फ वह है, जो कि अदालत की फाइल पर आ जाये। कानून के लिए वही हत्यारा है, जिसके खिलाफ गवाह हैं और एक चालाक वकील ने जिसका हत्यारा होना साबित कर दिया है। मैं जिन्दगी-भर एक सही स्थिति को गलत और गलत स्थिति को सही साबित करने में लगा रहा हूं और अपनी योग्यता को चन्द सिक्कों के एवज में बेचता रहा हूं। मेरे पेशे और एक वेश्या के पेशे में कोई फर्क नहीं है…"

"फर्क क्यों नहीं है?" भीड़ में से एक महीन आवाज निकली और आवाज के साथ-साथ एक भड़कदार औरत सामने आ खड़ी हुई। उसने तीखे अन्दाज में कहा, "आपको इस तरह मेरे पेशे की तौहीन करने का कोई हक नहीं है। आपके और मेरे पेशे का किसी भी तरह मुकाबला नहीं किया जा सकता। आपका पेशा झूठ और सिर्फ झूठ है, झूठ के सिवा कुछ नहीं है। और मेरा पेशा, तल्ख ही सही लेकिन जिन्दगी की सबसे बड़ी सच्चाई है। इन्सान के जिस्म से बड़ा सच शायद ही कोई हो और मैं इसी सच को बेचती हूं। लेकिन आप? आपके पास बेचने के लिए झूठ के सिवा है क्या?"

"कुछ नहीं, कुछ भी नहीं!" काले कोटवाले आदमी ने भर्रायी हुई आवाज में कहा, "गलत फैसले करने की सजा फांसी है तो गलत फैसले करवाने की सजा भी फांसी ही है!" उसने न्यायाधीश के गले से फांसी का फन्दा निकाला और अपने गले में डालकर उसी तरह झूल गया।

मुझे लगा कि वह वकील नहीं, खुद मैं फांसी पर झूल गया हूं! नहीं झूल गया हूं तो झूल जाना चाहिए। मैं भी तो वकील रहा हूं और मैंने भी वही अपराध किया है, जो कि इस वकील ने। उन शरारती लड़कियों के चेहरे मेरे सामने खिंच आये, जिन्होंने उस मासूम लड़के के साथ बलात्कार किया था और फिर उसकी हत्या कर दी थी! मुझे लगा—कुछ देर और वहां खड़ा रहा तो मैं सचमुच ही फांसी पर झूल जाऊंगा। मैं तेजी से पीछे हट गया।

भीड़ पर आतंक छाया था। आज यह सब क्या हो रहा है? एक के बाद एक हत्या, सामूहिक हत्या और आत्महत्या! इनसे कोई कब तक

बचेगा ? आखिर कब तक ? सबके सिर पर मौत मँडरा रही है, फिर भी वे उन्मुक्तता-दिवस मना रहे हैं ! अनुभव लूट रहे हैं ! तमाम लोग एक साथ कैसे पागल हो गये हैं ? हो गये हैं या उन्हें बना दिया गया है ?

भीड़ बिखरने लगी तो मेरी निगाह जेल की वर्दी पहने कुछ कैदियों पर पड़ी। मैं चौंका। एक कैदी से पूछा, "क्यों भई, तुम यहां कैसे ?"

कैदी ने अविश्वास-भरी नजर मेरी तरफ उठायी। फिर धीरे-से बोला, "क्यों, मैं आदमी नहीं हूँ ?"

"आदमी…" मुझे तय करने में थोड़ी देर लगी।

वह तेवर बदलकर बोला, "मुझे मालूम है कि तुम लोग हमें आदमी भी नहीं समझते। यही वजह है कि हर कैदी जेल से निकलने के बाद ऐसे कारनामे करता है, जिनसे तुम जैसे शरीफ लोग जान सकें कि वह भी कुछ है। आज यही बताने के लिए हम सब बाहर आ गये हैं।"

मैं उसकी बात को ठीक तरह से सुन नहीं सका। इस बीच मैं अपने सबसे नजदीकी दोस्त – जेलर के बारे में सोचता रहा।

कैदी की बात पूरी हुई तो मैंने उससे पूछा, "तुम्हारा जेलर कहां है ?"

"जेलर ?" वह जोर से हँसा, "वहीं, जहां आज उसे होना चाहिए था।"

"क्या मतलब ?"

"मतलब यह कि वह जेल की काल-कोठरी में बन्द है !"

मैं तेजी से भीड़ को चीरकर बाहर निकला और सीधा जेल पर जा पहुँचा।

सदर दरवाजे का फाटक उन्मुक्त प्रेमी की बाँहों की तरह खुला था। बर्ड के बूढ़े पेड़ के पत्ते हवा के साथ-साथ उड़ते तो खरखराहट दूर तक रेंगती। मैं बिना किसी दहशत के अन्दर दाखिल हो गया। पूरी जेल किसी पुराने सुनसान किले-जैसी लगी। मैं लम्बी बैरकों को काटता आगे बढ़ा।

किचन में आवारा कुत्ते घूम रहे थे। उनके पेट कमर से सटे थे और पूँछें टाँगों के बीच दबी थीं। मुझे देखकर वे जोर-जोर से गुर्राने लगे।

किचन की गन्ध नथुनों में घुसी तो पेट में फिर कुलबुलाहट होने लगी। मैंने बड़े-बड़े पतीलों में झांककर देखा। भट्टी के पास पड़े सामान को टटोला। गोदाम की तलाशी ली। कहीं कुछ भी न था। मैं थके कदमों से किचन के बाहर आ गया।

चलते-चलते मैंने अपने-आपको एक लम्बी सुरंगनुमा गैलरी में पाया।

उसके दोनों तरफ तंग कोठरियाँ थीं और ऊपर गुम्वददार छत। धीरे-धीरे सुरंग अँधेरे में डूबने लगी। मैं सहमे कदमों से आगे सरकता रहा। थोड़ी ही देर में कोठरियाँ, छत और मैं—सब अँधेरे में डूब गये। मैं धीरे-धीरे कदम उठाता मगर उससे भी भारी आहट होती। यह आहट डरावने अँधेरे को और भी डरावना बना जाती।

मैं वापस लौटने की सोच ही रहा था कि एक भारी आवाज सुनायी दी, "कौन ?"

"मैं !"

"तुम ? तुम यहाँ कैसे ?"

"बताऊँगा। लेकिन तुम हो कहाँ ?"

"सीधे चले आओ—एकदम सीधे।"

कुछ कदम उठाते ही मैं लोहे के सींखचों के दरवाजे से जा टकराया। दरवाजे के पीछे से उसकी साँस मुझ तक आ रही थी। उसने सींखचों में से हाथ निकालकर मेरे हाथ को मजबूती से कस लिया और ललककर पूछा, "तुम यहाँ पहुँचे कैसे ?"

"पता चला था कि तुम यहाँ कैद हो।"

"तो ?"

"तो क्या, सोचा—तुम्हें मुक्त कर आऊँ !"

"तुम मुझे मुक्त नहीं कर सकते।"

"क्यों नहीं कर सकता ? मैं तैयार होकर आया हूँ।"

"तुम तो तैयार होकर आये हो लेकिन मैं तो तैयार नहीं।"

"वह क्यों ?"

"इसलिए कि आज मुझे मुक्त रहने का अधिकार नहीं है।"

"क्या मतलब ?"

"मैंने जिन्दगी-भर लोगों को बन्धन में रखा है। कम-से-कम एक दिन तो मुझे भी इस काल-कोठरी में रहना चाहिए।"

"अजीब अहमक हो।"

"हाँ, हूँ।"

"मैं अभी तुम्हारा अहमकपना निकालता हूँ।" मैंने हाथ छुड़ाकर लोहे की छड़ से ताले पर भरपूर वार किया।

ताला बहुत मजबूत था। वह टूटा नहीं।

मैंने फिर वार किया और तब तक करता रहा, जब तक कि ताला टूट नहीं गया। मैंने दरवाजे को अपनी तरफ खींचा और दोस्त को डाँटकर बोला, "निकलो बाहर !"

"तुम मुझे मजबूर मत करो। आज मैं तुम्हारा भी कहा नही मान सकता।"

"मान क्यों नही सकते!" मैं कोठरी मे घुसा और उसे बाहर धकलने लगा।

उसके शरीर का बोझ कई गुना बढ़ गया। वह थकी हुई आवाज मे बोला, "तुम मुझे अच्छी तरह जानते हो, फिर भी मजबूर क्यों कर रहे हो? यहाँ बैठे मैं जैसे-तैसे अपने से लड़ रहा हूँ। एक बार बाहर निकल गया तो अपने को माफ नही कर सकूँगा।"

एक अजीब चुप्पी उसके और मेरे बीच आकर जम गयी। कुछ देर हम दोनों उस चुप्पी को सहते रहे।

आखिर मैंने मायूस होकर कहा, "अच्छा, तो मैं चलूँ?"

उसने कोई जवाब नही दिया।

मैं चुपचाप कोठरी से बाहर निकला और अँधेरे में डूबी सुरंग को पार करने लगा।

जेल के सामने से सीधी सड़क फौजी छावनी को जाती है। मैं उस पर आगे बढ गया। छावनी मेन मार्केट मे पहुँचा तो देखा—पूरा बाजार खुला पडा है और एक जवान राइफल ताने शिकारी की मुस्तैदी से चक्कर लगा रहा है। सडक पर जहाँ-तहाँ ताजी लाशें पडी हैं।

मैं चुपके से दायें हाथ मुडनेवाली सडक पर आ गया। सड़क के साथ-साथ अजीबो-गरीब डिजाइन के बँगलो की कतार चली गयी है। बँगलों में से इनसान के खून और बारूद की मिली-जुली गन्ध आ रही है। सामने लॉन पर अफसरों की गुदगुदे जिस्मवाली बीवियो की खिलखिलाहट और रबर के बबुओ जैसे बच्चों की किलकारी तैर रही है।

सडक के दूसरी तरफ रेस-कोर्स मे रेस के घोड़े दौड रहे हैं।

बँगलों की कतार जहाँ खत्म होती है, उससे कुछ फासले पर एक ऊँची इमारत है। इमारत के ऊपर बहुत-से सचार-यन्त्र लगे हैं। यह फौज का हेड-क्वार्टर है। हेड-क्वार्टर के चारो तरफ कँटीले तारो की बाढ़ है। उन तारो में हर समय बिजली का करट दौडता रहता है। सदर दरवाजे के दोनों तरफ चमचमाती तोपें रखी हैं। रोज यहाँ कई सन्तरी पहरे पर तैनात रहते थे। लेकिन आज वे तमाम लोग उन्मुक्तता-दिवस मनाने या उस नौजवान की गोली का शिकार बनने चले गये हैं।

सदर दरवाजे से घुमावदार सड़क अन्दर जाती है। सड़क के किनारे-किनारे रंग-बिरंगे फूल खिले है। फूलो की नर्म पंखुड़ियो पर बारूद की

महीन पर्त जमी है। कुछ दूर चलने के बाद दफ्तर आ गया। दफ्तर की इमारत ठोस और शानदार है। तमाम दरवाजे खुले पड़े हैं और वहाँ एक भी पहरेदार नहीं है।

मैं चुपके से दफ्तर में दाखिल हो गया। मैं जिस गैलरी में से गुजर रहा था, उसके आस-पास के कमरों में तरह-तरह के यन्त्र लगे थे।

गैलरी जहाँ खत्म हुई, वहाँ एक बड़ा कमरा था। उस कमरे में एक मेज के पीछे तनी मूँछों और कसी भवोंवाला एक रोबदार आदमी गुमसुम बैठा था।

मैंने दरवाजे पर ठिठककर पूछा, "क्या मैं अन्दर आ सकता हूँ?"

वह अपने में इस कदर डूबा था कि उसने मेरी तरफ कतई ध्यान नहीं दिया। मैं बिना इजाजत के ही अन्दर पहुँच गया और उसके सामने एक कुर्सी पर बैठ गया। उसके चेहरे पर छपा दुख बहुत ही भला लग रहा था। इतने रोबीले आदमी को दुखी देखना, कितना सुखकर अनुभव है!

कुछ देर बाद उसकी नजरें ऊपर उठीं और अचानक वह चेहरा गायब हो गया। उसकी जगह एक दूसरे सख्त चेहरे ने ले ली, "तुम? कौन हो तुम?"

"मैं—एक आदमी।"

"बकवास बन्द करो। यह बताओ कि तुम यहाँ क्यों आये हो?"

"क्यों आया हूँ, यह तो मुझे भी मालूम नहीं।"

"क्या मतलब?"

"मतलब यह कि दरवाजा खुला देखा और चला आया।"

"अजीब आदमी हो!" उसने फिर चेहरा बदला। इस चेहरे की दोनों बड़ी-बड़ी आँखें मुस्करा रही थीं। नये चेहरे ने मुझसे पूछा, "क्या चाहते हो?"

"कुछ नहीं।"

"तो फिर यहाँ क्यों बैठे हो?"

"मैं एक बात सोच रहा हूँ।"

"क्या?"

"आप इतनी जल्दी-जल्दी चेहरे कैसे बदल लेते हैं?"

वह हँसा, "ये तमाम चेहरे मेरे नहीं हैं। मेरा अपना चेहरा तो कई बरस हुए खो गया था। उसके बाद मैं बराबर मशीनी चेहरों से काम चला रहा हूँ।"

"क्या आप वह दुखी चेहरा एक बार फिर लगाकर दिखा सकते हैं?"

"नहीं।"

"वह क्यों ?"

"इसलिए कि यह मेरे बस में नहीं है।"

"मैं जान सकता हूँ कि आप कौन हैं ?"

"था तो बहुत-कुछ लेकिन अब तो कुछ भी नहीं।"

"यानि ?"

"अब तक मैं इस महान देश का सर्वोच्च सेनापति था लेकिन अब रहना नहीं चाहता।"

"वह क्यों ?"

"इसलिए कि मैं जीना चाहता हूँ।"

"इस पद पर रहने आपको क्या तकलीफ है ?"

"तुम एक ऐसे आदमी की तकलीफ का अन्दाजा नहीं लगा सकते, जिसे बहुत शक्तिशाली समझा जाता है, शक्ति उसके हाथों में है भी लेकिन वे हाथ कटे हुए हैं।"

"वह कैसे ?"

"अपनी मरजी से वह उस शक्ति का जरा भी इस्तेमाल नहीं कर सकता। इस्तेमाल करने की सोच भी नहीं सकता। कहीं सोच न ले, इसलिए हर वक्त उसके ऊपर और उसके भीतर पहरा रहता है।"

"इस पहरे के बिना देश का काम चल सकता है ?"

"कौन-सा काम ?"

"काम···देश की रक्षा ?"

"यही कहकर तो लोगों को बहकाया जाता है।"

"क्या मतलब ?"

"मतलब एकदम साफ है लेकिन उस पर अन्धी देशभक्ति की इतनी धूल डाल दी गयी है कि वह नजर नहीं आता।"

"मैं आपकी बातें समझ नहीं पा रहा।"

"समझ कैसे सकते हो ! धूल जो पड़ी है।"

"तो फिर असलियत क्या है ?"

"यह कि इस पूरी शताब्दी में हमें एक बार भी अपने देश की रक्षा के लिए किसी बाहरी दुश्मन से नहीं लड़ना पड़ा। इसके विपरीत देश के भीतर मामूली फसाद होने पर भी हमारी बहादुर सेना गोलियाँ चलाती रही है।"

"शान्ति बनाये रखने के लिए यह जरूरी नहीं है ?"

"जरूरी है लेकिन शान्ति नहीं, सत्ता बनाये रखने के लिए। ठीक यही काम विदेशों में हमारी शान्ति सेनाएँ करती रही हैं। उन देशों में प्रभाव

बनाये रखने के लिए हम अपने देश के लाखों जवानों को युद्ध की आग में झोंकते रहे हैं और वहाँ की निरीह जनता पर बमबारी करते रहे हैं। मैं ऐसी हत्यारी सेना का सेनापति नहीं हूँ—नहीं हूँ !" उसने करीब-करीब चीखकर कहा और तेजी से उठकर उस शानदार इमारत से बाहर की तरफ दौड़ता चला गया।

थोड़ी देर बाद बाहर से गोली चलने के धमाके की आवाज आयी।

मैं हतप्रभ रह गया। कुछ देर तो समझ ही नहीं सका कि यह सब क्या और कैसे हो गया ! फिर मुझे उस बहादुर आदमी के दुखद अन्त के लिए अफसोस होने लगा। मैं उठा और धीरे-धीरे गैलरी को पार करता हुआ बाहर आ गया।

सड़क के किनारे लगे पौधे खुनकभरी हवा में झूम रहे थे। मौसम के फूल मुस्करा रहे थे। उनमें से ताजे खून की गन्ध आ रही थी !

सदर दरवाजे से निकलकर मैं दायें हाथ मुड़ गया। कुछ दूर चलने के बाद शहर पीछे छूटने लगा और जंगल शुरू हो गया। धीरे-धीरे जंगल घना होता गया। कुछ और आगे चलने पर सड़क पर एक बोर्ड लगा दिखायी दिया : 'फॉरेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट।'

अब मैं ठीक जगह पर आ पहुँचा था। असल में यह 'फॉरेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट' नहीं, जासूसी का हेड-क्वार्टर है। हेड-क्वार्टर घने जंगल के बीच दो सौ एकड़ के रकबे में फैल गया है। मेन बिल्डिंग में सात मंजिलें हैं और वे सातों जमीन के अन्दर बनायी गयी हैं ! पूरे हेड-क्वार्टर के ऊपर जंगल उगा है। बाहर से देखने पर कतई शक नहीं होता कि वहाँ जंगल के अलावा कुछ और है !

इस जासूसी हेड-क्वार्टर के बारे में तरह-तरह की अफवाहें पूरी दुनिया में फैली हैं। बहुत दिनों से इच्छा थी कि कभी उसे अन्दर से देखा जाये। लेकिन वहाँ पहुँचने के लिए एक खास इजाजत की जरूरत पड़ती थी और 'खास काम' के बिना इजाजत मिलती नहीं थी। चलो, आज यह इच्छा भी पूरी हो जायेगी—मैंने सोचा और तेजी से सदर दरवाजे की तरफ बढ़ा। लेकिन सामने जो कुछ दिखायी दिया, उससे मेरे पैर जहाँ के तहाँ ठिठक गये। दरवाजे पर चार संगीनधारी मुस्तैदी से पहरा दे रहे थे

यह क्या ? यहाँ आज भी पहरा है ?

मैं हिम्मत करके आगे बढ़ा और एक पहरेदार से पूछा, "क्यों भ तुम्हें मालूम नहीं कि आज उन्मुक्तता-दिवस है ?"

"है।"

"तो फिर तुम यहाँ क्या कर रहे हो ?"
"ड्यूटी।"
"आज भी ड्यूटी ?"
"हाँ, आज हमारी स्पेशल ड्यूटी है।"
"वह क्यो ?"
"यह सोचना हमारा काम नही है।"

उससे बहस करना बेकार था। मैं वापस मुड़ गया। शरीर एकदम शिथिल हो गया है। वह चल जरूर रहा है लेकिन थकान के मारे उसके तमाम हिस्सो में आपस मे कोई ताल्लुक नही रह गया है।

इस वक्त थोड़ी-सी पीने को मिल जाये तो ! लेकिन मिलेगी कहाँ ? जरायमपेशा बस्ती का वह अड्डा ? लेकिन आज वहाँ भी कौन 'बिजनेस' कर रहा होगा ? वे लोग तो रोज ही उन्मुक्तता-दिवस मनाते हैं ! मुफ्त नही मिल सकती तो कोई मोल ही दे दे।

हाथ जेब में गया। आज इतना कुछ टूट-फूट गया है, मगर बेशर्म दस का नोट किसी तरह बचा रह गया है। नोट को चुटकी मे मसलते हुए खयाल आया—आज इस नोट से कुछ भी नही खरीदा जा सकता। इसमें आज कतई वजन नही रह गया है। इस पर छपे आँकडे इन आँकडो की कीमत चुकाने का वादा और वादे के नीचे हस्ताक्षर—सब बेमानी हैं। दुनिया ने आज पहली बार बिकने से इनकार कर दिया है !

चलते-चलते मैं एक मार्ग-चिह्न पर आकर रुक गया। लिखा था—चर्च रोड। थोड़े ही फासले पर शहर का सबसे बड़ा चर्च है। चर्च के अहाते में ही बड़े पादरी का निवास है।

थोड़ी देर बाद मैं चर्च के सामने खड़ा हूँ। वहाँ लोगो की भीड़ लगी है। आज चारो तरफ जो कुछ हो रहा है, उसका कोई मतलब उनकी समझ मे नही आ रहा। वे भयभीत हैं। तरह-तरह की शकाएँ उन्हें घेर रही हैं। शकाओं के समाधान के लिए ही वे पादरी की शरण मे आये हैं।

पादरी चर्च में नहीं हैं। आज सुबह से ही वह अपने मकान से नही निकले। मकान के दरवाजे पर खड़े लोग पुकार रहे हैं। बहुत देर बाद दरवाजा खुलता है। पादरी आते हैं। उन्हे देखकर लोग चौंक उठते हैं। पादरी आज अपनी परम्परागत वेषभूषा मे नही, साधारण आदमी के वेष मे हैं। वह सधे कदमो से आते है और चर्च में न जाकर लोगों के बीच आ खड़े होते हैं।

चारो तरफ से प्रश्नो की बौछार शुरू हो जाती है। वह चुपचाप खड़े

बौछार को झेलते रहते हैं। कुछ देर बाद जमी हुई आवाज में कहना शुरू करते हैं :

"प्यारे भाइयो !"

लोग चौंके। पादरी अपना प्रिय सम्बोधन 'परम पिता के प्यारे पुत्रो' भूलकर आज क्या कह रहे हैं ?

पादरी ने आगे कहा, "मुझे खेद है कि आपकी जिज्ञासाओं का वैसा समाधान आज मेरे पास नहीं है, जिसकी आप मुझसे आशा करते हैं। आज मैं जो कुछ देख रहा हूं, वह मुझे अपने अब तक के जीवन से नफरत करने पर मजबूर करता है। परम पिता भी मुझे इस नफरत से बचा नहीं पा रहे। आप मुझे धर्मावतार और पवित्रात्मा समझते रहे हैं इसलिए आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि मैं घोर पतित व्यक्ति हूं। आप लोग आजीविका के लिए अपने शारीरिक या मानसिक श्रम को बेचते हैं लेकिन मैंने तो अपनी आत्मा को ही बेच रखा है। सिसकती हुई आत्मा की आवाज मेरे कानों में बराबर गूंजती रही है लेकिन मैंने कभी भी इस आवाज को सुनने की कोशिश नहीं की।"

लोगों के चेहरों का रंग तेजी से बदलने लगा। पादरी को आज हो क्या गया है ! यह कह क्या रहे हैं !

पादरी ने आगे कहा, "आप लोग सोच रहे होंगे कि वह कौन-सा खरीदार है, जिसने मेरी आत्मा को खरीद लिया ? खरीदार एक वही है। उसी ने आपके श्रम को खरीद रखा है और उसी ने मेरी आत्मा को। फर्क सिर्फ इतना है कि आप अपने श्रम का सौदा खुले बाजार में करते हैं और मेरी आत्मा का सौदा काले बाजार में हुआ था। यह एक खतरनाक सौदा था। ऐसा सौदा, जिसमें आदमी की हत्या कर दी जाती है और किसी तरह की आवाज नहीं होती, किसी रंग का खून नहीं बहता ! राजनीति धर्म के साथ सौदा करके, उसे अपने लिए इस्तेमाल करती रही है। आप लोग सत्ता का विरोध न कर सकें इसलिए मैं आपको धर्म का भय दिखाता रहा हूँ और बराबर दोहरी यन्त्रणा में पिसता रहा हूँ। लेकिन अब मेरी कुचली हुई आत्मा इस यन्त्रणा को बरदाश्त नहीं कर सकती। मैंने धर्म का लबादा उतार फेंका है और आप लोगों के बीच आ खड़ा हुआ हूँ !"

पादरी का सरमन पूरा हुआ तो लोगों के चेहरे स्याह पड़ गये थे। सबसे ज्यादा स्याह चेहरा पादरी का था। धीरे-धीरे लोग बिखरने लगे। पादरी भी उनके साथ चर्च के बाहर आ गये।

मैं जिस रास्ते पर चलकर आया था, उस पूरे रास्ते पर काँटे उगे थे। काँटे

हैं, आप ?"

उसने झटके से अपना हाथ छुड़ाया और पेण्टिग पर वार कर दिया।

अब वह मेरी तरफ मुड़ा, "आपको क्या तकलीफ है ?"

"तकलीफ? आप मेरी तकलीफ का अन्दाजा नहीं लगा सकते ! मेरी इच्छा हो रही है कि आपका गला घोट दूं।"

"तो घोट दो !"

मुझे उम्मीद न थी कि वह इतनी आसानी से तैयार हो जायेगा मैंने तिलमिलाकर कहा, "आप इस पेण्टिग की हत्या क्यों कर रहे हैं ?"

"अपनी कला को मुक्त करने के लिए।"

"क्या मतलब ?"

"मतलब यह कि जिसे आप पेण्टिग कह रहे हैं, वह पेण्टिग है ही नहीं।"

"लेकिन मुझे तो यह बहुत पसन्द है।"

"पसन्द इसलिए है कि आपको बार-बार समझाया गया है कि आपको क्या पसन्द करना चाहिए।"

मेरा सिर चकरा गया। पूछा, "यह पेण्टिग नहीं है तो आपने इसे बनाया ही क्यों ?"

"लोगों को बेवकूफ बनाने के लिए।"

"आप लोगों को बेवकूफ क्यों बनाते हैं ?"

"इसलिए कि वे बनना चाहते हैं।"

"बनना चाहते हैं ! वह क्यों ?"

"बेवकूफ बनने से उनका धन्धा चलता है और मेरा भी। अब तक मैं समझता रहा कि मैं उन्हें बेवकूफ बना रहा हूं। लेकिन आज पहली बार अहसास हुआ कि मैं उन्हें नहीं, खुद अपने को बेवकूफ बनाता रहा हूं।"

"वह कैसे ?"

"मैंने जहां से अपनी यात्रा शुरू की, वह आदमी की पहचान का रास्ता था। मेरे शुरू के चित्रों में यही पहचान है। प्रशंसा और यश मिला तो उस रास्ते को भूल गया और राजमार्ग पर आ गया। अब मेरे पास दे को नया कुछ न था। उधर प्रशंसकों की भीड़ लगी थी और वे मुझ बराबर नये की मांग कर रहे थे। बस, यहीं से मैंने बेवकूफ बनाना अ बनना शुरू किया।"

मैंने आश्चर्य से उसकी तरफ देखा।

वह कहता गया, "मैं अपने शरीर पर तरह-तरह के रंग लगा

कैनवास पर लुढ़कता चला जाता। इससे कैनवास पर जहाँ-तहाँ रंगों के धब्बे लग जाते। लीजिए, पेण्टिंग तैयार! उस पेण्टिंग की प्रशंसा मे दुनिया भर की कला-पत्रिकाओं मे लेख प्रकाशित होते, उस पर राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय पुरस्कार दिये जाते और कला के व्यापारी उसे कई-कई लाख मे खरीद लेते। उसे खरीदने के लिए उनके पास बहुत-सा काला धन था।"

"काला धन?"

"हाँ, काला। यह कैसा मजाक है कि मेरी कला के प्रशंसक और खरीदार काले धन के व्यापारी हो रहे हैं। मूर्ख लोगो की प्रशंसा किसी कलाकार को किस हद तक मूर्ख बना सकती है, इसे आप नही समझ सकते।"

"अपनी मूर्खता का अहसास आपको पहले कभी नही हुआ?"

"हुआ। लेकिन इस अहसास को दबाने के लिए मैं अपने चारों ओर महानता का प्रभामण्डल बुनता रहा। एक तरफ यह प्रभामण्डल और दूसरी तरफ अपनी मूर्खता का अहसास। दो तरह के दबावों के बीच मैं भीतर-ही-भीतर टूटता रहा हूँ। टूटन से बचने के लिए एल. एस. डी., सोमा और स्लिपिंग पिल्स लेता रहा हूँ। लेकिन ये सब भी टूटने से कहाँ बचा पाते हैं!" कहकर उसने फिर चाकू सँभाला और झटके के साथ पूरी पेण्टिंग को चीरता चला गया।

मैं आगे बढ़ा तो थोड़े ही फासले पर भीड़ का एक और गुच्छा दिखायी दिया। शायद वहाँ खाने का कुछ सामान हो। मैं लपककर पहुँचा। भीड़ खाने की नही, पीने की दुकान पर थी। दुकान काफी बड़ी थी लेकिन भीड़ उससे कही ज्यादा बड़ी। जिसके हाथ जो बोतल आती, उसे ही खीच लेता और खड़े-खड़े गटक जाता। नीट। जो जितनी पी सकता था, पी रहा था। कुछ लोग जितनी पी सकते थे, उससे ज्यादा पी गये थे और पटरी पर औंधे मुँह लेटे धर्मशास्त्र पर भाषण दे रहे थे।

पीने के बाद भूख और भड़क उठी। खाना? लेकिन आज खाना बनाने की फुरसत किसे है! खाना बनानेवाले तमाम लोग दूसरे ज्यादा महत्त्वपूर्ण कामो मे व्यस्त हैं!

मैं दुकान से निकला तो ठीक सामने पार्क मे बॉस खड़ा दिखायी दिया। बॉस ने अपनी टाई खोलकर उसमें फाँसी का फन्दा लगाया और पार्क की रेलिंग पर चढ़कर टाई के दूसरे सिरे को एक दरख्त की शाख से बाँधने

लगा। मैं चौंका। इस शख्स को आज क्या हो गया ? इसे तो 'स्टीलमैन' कहा जाता था !

उन दिनों मैं भविष्य-मन्त्रालय में काम करता था। इस मन्त्रालय का काम था—भविष्य के बारे में जानकारी जुटाना। एक निश्चित अवधि के पश्चात् विश्व की जनसंख्या कितनी होगी ? राजनीति, विज्ञान, समाज-शास्त्र, धर्म, साहित्य, कला और मनुष्य को प्रभावित करनेवाली दूसरी शक्तियाँ भविष्य के उन लोगों पर क्या प्रभाव डालेंगी ? उन लोगों की आकांक्षाएँ और अपेक्षाएँ क्या होंगी ? उनकी अपेक्षाओं को ध्यान में रखते हुए आज के उत्पादनों में क्या-क्या परिवर्तन करने होंगे और क्या-क्या नये उत्पादन शुरू करने होंगे ? यह सब और इसके अलावा भविष्य के बारे में जिस भी जानकारी की आवश्यकता हो, वह जुटाना इस मन्त्रालय का काम था। और यह शख्स भविष्य-मन्त्रालय का डायरेक्टर यानि मेरा बॉस था—बहुत सख्त किस्म का बॉस।

मैं मन्त्रालय में 'फ्यूचरोलॉजिस्ट' के पद पर काम कर रहा था। पूरी दुनिया के भविष्य का शजरा तैयार करने की जिम्मेदारी मेरे ऊपर थी लेकिन मैं खुद अपने भविष्य के बारे में नहीं जानता था।

एक दिन अचानक बॉस मेरी केबिन में दाखिल हुआ और अपनी आदत के अनुसार सख्ती से बोला, "क्यों ? आप खाली क्यों बैठे हैं ? आपके पास काम नहीं है ?"

"जी, काम तो है।"

"तो फिर ?"

"मैं कुछ सोच रहा था।"

"क्या ?"

"अपने भविष्य के बारे में···"

"बेवकूफ !" बॉस ने सख्ती से कहा, "जानते हो—हमारा काम अपने भविष्य के बारे में नहीं, दूसरों के भविष्य के बारे में सोचना है। तुम्हारे भेजे में थोड़ी-बहुत अक्ल है ?"

मैं बॉस को बताना चाहता था कि मुझमें कितनी अक्ल है। लेकिन वह तेजी से मुड़ा और खट-खट करता अपने चैम्बर की तरफ चला गया।

मैं तिलमिलाकर रह गया।

अब मैंने एकदम नये कोण से अपने भविष्य के बारे में सोचना शुरू किया। कुछ देर सोचता रहा। फिर कलम उठाकर लिखना शुरू कर दिया।

थोड़ी देर बाद मैं बॉस के चैम्बर में था और मेरा 'प्रेमपत्र' उसके

सामने रखा था। बॉस ने एक नजर उस पर मारी और तिकोने चश्मे के ऊपर से मुझे घूरकर देखा, "तुमने अपने भविष्य के बारे में यही सोचा है ?"

"जी !"

"हम तो तुम्हें प्रोमोशन देने के बारे में सोच रहे थे। आखिर तुम्हें परेशानी क्या है ? सर्विस क्यों छोडना चाहते हो ?"

"मैं अपने भविष्य के बारे मे सोचना चाहता हूँ।"

"बेवकूफ !" बॉस ने सख्ती से कहा।

मैंने और भी सख्ती से जवाब दिया, "जब तक मैं आपकी नौकरी में था तो आपको अधिकार था कि मुझे दिन में सौ बार बेवकूफ कहें। लेकिन अब वह अधिकार आपके पास नही है। अपने शब्द वापस लीजिए !"

बॉस ने अपने शब्द और मेरी सर्विस—दोनों साथ-साथ वापस ले लिये !

और आज, वही बॉस अपनी टाई में फाँसी का फन्दा लगाकर दरख्त से बाँध रहा है !

मैं सडक पार करके पार्क मे आ गया और उसके नजदीक जाकर पूछा, "हैलो बॉस ! कैसे हो ?"

हमेशा की तरह उसने 'फाइन' नही कहा। वह रेलिंग से नीचे उतर आया और मरे हुए स्वर मे बोला, "तुम ठीक कहते थे। दूसरो के भविष्य के बारे मे हम एक हद तक ही सोच सकते हैं। आखिर अपने भविष्य के बारे में ही सोचना पडता है।"

"तो आपने अपने बारे मे क्या सोचा ?"

"देख नही रहे ?" बॉस ने दरख्त की शाख से बँधे टाई के फन्दे की तरफ इशारा करते हुए कहा।

"देख तो रहा हूँ। लेकिन यह तो कोई सोचना नही है।"

"हो सकता है, तुम्हारे लिए न हो। लेकिन मैं अपने बारे मे इसके अलावा कुछ नही सोच सकता।"

"वह क्यो ?"

"सत्ता जिसके हाथ मे है, वह लोगों पर हुकूमत करना चाहता है और साथ ही उनका प्यार भी पाना चाहता है। इसीलिए वह नफरत करने का काम मुझ जैसो को सौंप देता है।"

"नफरत करने का काम ?"

"हाँ, इस काम को कराने के लिए उसने नफरत के पुर्जों का एक छोटा-सा वर्ग तैयार कर लिया है। इस वर्ग के बच्चों को शुरू से ही एक खास

माहौल में रखकर नफरत करने के लिए तैयार किया जाता है।"

"वह कैसे ?"

"इस वर्ग के लिए अलग स्कूल और अलग भाषा है, अलग रेस्तराँ और अलग शापिंग सेण्टर हैं, अलग क्लब और अलग एटिकेट हैं। उनके जीवन का पूरा मुहावरा ही अलग है। उन्हें बताया जाता है कि वे विशिष्ट वर्ग के लोग हैं और हुकूमत करने के लिए पैदा हुए हैं। लेकिन यह हुकूमत कितनी नकली है!"

"नकली ?"

"हाँ, इस हुकूमत के साथ कितनी खुशामद, कितना भ्रष्टाचार और कितनी नफरत जुड़ी है! नफरत पर जीनेवाली इस जिन्दगी से मुझे नफरत हो गयी है।" कहकर बॉस फुर्ती से रेलिंग पर चढ़ गया और टाई के फन्दे में गर्दन डालकर झूल गया!

मगर वह टाई, जिस पर बॉस सारी उम्र गर्व करता रहा था, आज उसके बदले हुए व्यक्ति का बोझ नहीं सँभाल सकी और चटाख से टूट गयी!

सड़क के किनारे फिर भीड़ जमा है। नजदीक पहुँचा तो देखा—कई कटी-फटी लाशें पटरी पर पड़ी हैं और खून एक सोते की शक्ल में नाली की तरफ बह रहा है। एक निहायत खूबसूरत युवक तेज बरछे को पत्थर पर रगड़कर और तेज कर रहा है।

"यह क्या हो रहा है ?" मैंने भीड़ में खड़े एक बूढ़े आदमी से पूछा।

करीब सरक आया और फुसफुसाकर बोला, "यह नौजवान बहुत जालिम है। जो भी खूबसूरत लड़की नजर आती है, उसी का खून कर देता है। सुबह से सात खून कर चुका है।"

अब मैंने युवक को जरा गौर से देखा—बाल बढ़े हुए और बेतरतीब मूँछें। लापरवाही से पहने गये ढीले-ढीले कपड़े। आँखों में एक अजीब खालीपन। लगा—इसे तो मैंने कहीं देखा है। कहीं, लेकिन कहाँ ? किसी रेस्तराँ में ? पब में ? मूवी में ? क्लब में ? फिर ध्यान आया—अरे! यह तो वही लड़का है, जिसे मैं रोज देखता हूँ। हर कहीं देखता हूँ।

मैं भीड़ में धँस गया।

युवक उसी तल्लीनता से बरछा पैना कर रहा था। मैंने आगे बढ़कर पूछा, "तुम हत्याएँ क्यों कर रहे हो ?"

युवक ने आँखें ऊपर उठायीं, गोया उसकी तपस्या भंग की गयी हो, "आज भी इस तरह के बेहूदा सवालों के जवाब देने होंगे ?" उसने स्व

बदलकर सख्ती से पूछा, "आखिर यह सवाल पूछने की हिम्मत तुम्हें कैसे हुई ?"

मैंने और भी सख्ती से जवाब दिया, "मैं तुम्हारी इस हरकत को बरदाश्त नहीं कर पा रहा।"

युवक ने जोर का ठहाका लगाया। फिर रहस्यमय ढंग से पूछा, "मैंने जिनकी हत्याएँ की हैं, उनमें कोई तुम्हारी प्रेमिका तो नहीं थी ?"

"तुम्हें इससे मतलब ? वे मेरी नहीं तो किसी-न-किसी की प्रेमिकाएँ तो होंगी ही !"

युवक धीरे-धीरे मुस्कराने लगा, "तुम किसी पुरानी कहानी के नायक मालूम पड़ते हो !"

गाली खाकर भी मैं चुप रह गया।

युवक फिर बोला, "बहादुर होना कोई बुरी बात नहीं, लेकिन वह जमाना अब नहीं रहा, जब एक औरत के लिए दो शहंशाहों की फौजों की तलवारें खिंच जाती थीं और मुल्क तबाह हो जाते थे !"

"तो क्या ऐसा जमाना आ गया है कि चौराहे पर खूबसूरत लड़कियों की हत्याएँ की जायें ?"

"हाँ, और यह भी कि लोग चुपचाप खड़े होकर यह तमाशा देखें।"

"बहुत हो चुका तमाशा। मैं देखता हूँ—अब कैसे होता है !"

"इतनी भीड़ में तुम अकेले शख्स हो, जो इस तरह तैश खा रहे हो, वरना यहाँ कई ऐसे नपुंसक भी खड़े हैं, जिनकी प्रेमिकाओं या पत्नियों की मैंने हत्याएँ की हैं लेकिन वे भय के मारे कुछ भी नहीं कह पा रहे।"

भीड़ की बहुत-सी आँखें नीचे झुक गयीं।

मैंने कड़े स्वर में युवक से पूछा, "तो तुम नहीं बताओगे कि इन बेगुनाह हत्याओं का कारण क्या है ?"

"बताऊँगा। तुम दिलचस्प आदमी हो इसलिए तुम्हें जरूर बताऊँगा।" युवक ने बरछे को हवा में फहराते हुए कहा, "बात यह है प्यारे, कि मैं सिर्फ मजे के लिए हत्याएँ कर रहा हूँ।"

"मजे के लिए ?"

"हाँ, आदमी जो कुछ करता है मजे के लिए ही करता है। इतने लोग खुली सड़क पर गूँगे पड़े हैं, उन्हें देखकर तुमने एतराज क्यों नहीं किया ? शायद इसलिए कि तुम खुद वैसा करके आ रहे हो या करना चाहते हो। फर्क सिर्फ इतना है कि तुम्हें खूबसूरती को धीरे-धीरे खराब करने में मजा आता है और मुझे एकदम खराब कर देने में।"

"हत्या करने में तुम्हें सचमुच मजा आता है ?"

"मजा ! खूबसूरत गर्दन कटते ही खून का फव्वारा छूटता है तो कितना ानदार सीन सामने होता है। अफसोस ! तुम उस मजे का अन्दाजा भी हीं लगा सकते !"

"मैं तुम्हारी बातें समझ नहीं पा रहा।"

"समझ सकते भी नहीं। मुझे समझने के लिए वैसी ही तल्ख जिन्दगी जीना जरूरी है, जैसी कि मैंने जी है। एक इसी जीवन में अनेक बार मेरी हत्या की गयी है। बेशर्म हूँ कि मरकर भी नहीं मरा। बचा रहा, शायद बदला लेने के लिए।"

"बदला, लेकिन किससे ?"

"समूह से। उस समूह से जो आज पुकार-पुकारकर कह रहा है—'मेरी हत्या करो ! मेरी हत्या करो !' "

"समूह कब तुम्हारे पास दरख्वास्त लेकर आया ?"

"दरख्वास्त वह रोज लेकर आता है। यह दीगर बात है कि तुम उस दरख्वास्त को पढ़ नहीं पाते। तुम्हें मार-मारकर वह भाषा भुला दी गयी है। मुझे मालूम है—तुम्हारी जिन्दगी में भी आज तक जो कुछ हुआ, वह भी इस लायक ही है कि आज तुम सामूहिक हत्या करते। लेकिन फर्क सिर्फ इतना है कि तुम उस भाषा को भूल गये हो और मैं अभी नहीं भूल सका हूँ।"

"हत्या समूह नहीं, व्यवस्था करती है। इन मासूम लड़कियों की हत्या करके तुम व्यवस्था का क्या बिगाड़ लोगे ?"

"मैं क्या, उसका तो कोई भी कुछ नहीं बिगाड़ सकता।"

"अकेले तुम वाकई कुछ नहीं बिगाड़ सकते लेकिन···"

अचानक वही तेज रोशनी मेरे सामने कौंधी और उसके पीछे से वही दहकती हुई आँखें उभर आयीं। आँखें मुझे तेजी से घूर रही थीं—घूरे जा रही थीं···

लगा—जैसे मुझे लकुवा मार गया है। मेरे हाथ और पैर बुरी तरह काँप रहे हैं। मैं अभी—बिल्कुल अभी गिर जाऊँगा !

मैं गिर पाता, इससे पहले ही वे आँखें गायब हो गयीं। मैं धीरे-धीरे अपने में लौटा।

सामने से एक खूबसूरत लड़की आती दिखायी दी। युवक ने बरछा सँभाला और तेजी से उस पर झपटा।

लड़की भाग खड़ी हुई।

युवक और भी तेजी से उसके पीछे भागने लगा।

मैं बरदाश्त नहीं कर सका। लपककर युवक की गर्दन पकड़ ली और

उसे दबाना शुरू कर दिया।

युवक ने अपने जिस्म को मरोड़ा और झटके के साथ मेरे हाथो से निकलकर सामने आ खड़ा हुआ। बरछे को मेरे ऊपर तानते हुए उसने कहा, "अब बोलो !"

मैंने क्षण-भर युवक की तरफ गौर से देखा और फुर्ती से उसके हाथ पर झपट्टा मारा।

अब चमचमाता बरछा मेरे हाथ में था। मैंने एकदम ठण्डे स्वर मे कहा, "तुम इतने कायर हो कि सिर्फ खूबसूरती की हत्या कर सकते हो। और मैं, तुम्हारे हिसाब से कतई खूबसूरत नही हूँ। कुछ भी हो, मैं इस तरह बेगुनाह लड़कियों की हत्या नही होने दूँगा।"

हाँफता हुआ युवक चुपचाप एक तरफ जाकर बैठ गया।

थोड़े फासले पर सड़क के एक किनारे आग की लपटें दिखायी दी। आग ! मैं लपककर वहाँ पहुँचा। लपटें जलती हुई किताबो से उठ रही थी और उनके बराबर किताबो का एक और ढेर लगा था। एक सनकी-सा आदमी तटस्थ भाव से एक-एक किताब उठाकर आग मे डाल रहा था।

"अरे ! यह क्या कर रहे हो ?" मैंने आश्चर्य से पूछा।

उसने मेरी बात पर कतई ध्यान नही दिया और एक मोटी-सी किताब उठाकर आग मे फेंक दी।

मैं झुँझला उठा, "बोलते क्यो नही ? कौन हो तुम ?"

"मैं ?" उसने अपनी लम्बी गरदन मेरी तरफ घुमायी, "तुम मुझे नही जानते ?"

"नही।"

"मैं इस देश का राष्ट्रकवि हूँ।"

पाठ्यक्रम में पढ़ी कुछ तुकबन्दियाँ मेरे सामने तैर गयी। पूछा, "आप यह क्या कर रहे हैं ?"

[illegible] की तरफ उछाल दी

"मैं जीवन भर जो कुछ करता रहा, उसके लिए आज प्रायश्चित्त के अलावा और क्या किया जा सकता है ? मैंने अपना कवि-जीवन विद्रोह की कविता से शुरू किया था। मेरी वे कविताएँ कुछ ही समय मे देश के इस कोने से उस कोने तक गूँजने लगी। मुझे क्रान्ति-कवि कहा जाने लगा। एक के बाद एक पुरस्कारो की घोषणाएँ होने लगी। बिना माँगे ही मोटी रकम

की पेंशन मुझे दे दी गयी। फिर सरकार के सांस्कृतिक परामर्शदाता के ऊँचे पद को स्वीकारने के लिए मुझसे अनुरोध किया गया और आखिर एक दिन मुझे 'नेशनल पोयट' का सर्वोच्च सम्मान दे दिया गया। मैं खुश था कि जिस कविता को मैंने अपने खून से लिखा था, वह राष्ट्र के काम आयी है। राष्ट्र ने मेरा नहीं, मेरी कविता का सम्मान किया है। लेकिन यह सम्मान महँगा पड़ा! सचमुच कितना महँगा!"

"महँगा! वह कैसे?"

"आज सुबह मैं बाद में लिखी अपनी कविताएँ पढ़ रहा था। उन कविताओं में खून नहीं, मवाद भरा है। कुछ कविताओं में सत्ता की प्रशंसा की गयी है तो कुछ में निराशा और अवसाद को धर्मशास्त्रों की अश्लीलता से जोड़कर आध्यात्मिकता का भ्रम पैदा करने की कोशिश की गयी है। मैंने जिस खून से विद्रोही कविताएँ लिखी थीं, वह व्यर्थ गया। क्रान्ति-कवि से राष्ट्र-कवि बन जाने की यात्रा के दौरान मेरा कवि निरन्तर मरता गया है। आपके सामने जो व्यक्ति बैठा है, वह कवि नहीं, कवि की लाश है!" कवि ने बाकी बची तमाम किताबों को एक साथ आग में ढकेला और फिर खुद छलांग लगाकर उसके बीच कूद गया!

सूरज का गोला आकाश में काफी नीचे लुढ़क आया है। छाया लम्बी होती जा रही है। धूप में कतई गरमी नहीं रही। वह पीली पड़ती जा रही है। हवा में इनसान के ताजे खून और भुनते हुए जिन्दा मांस की गन्ध भरी है।

मैं कुछ आगे बढ़ा तो देखा —सड़क के किनारे गंजे सिरवाला एक संजीदा किस्म का आदमी बैठा है। उसके सामने एक अजीबोगरीब खिलौना रखा है। वैसा खिलौना मैंने पहले कभी नहीं देखा।

उस आदमी की चुप्पी ने मुझे खींचा। मैं दबे कदमों से वहाँ गया और उसके ठीक सामने चुपचाप बैठ गया।

उसने मेरी तरफ देखा। कहा कुछ नहीं। वैसा ही मैंने भी किया। उसने मेरी तरफ से नजर हटाकर अपने और मेरे बीच रखे खिलौने पर जमा दी।

उसका चुप मुझे बहुत भला लग रहा है। मैं उसे भंग नहीं करना चाहता। लेकिन वह खुद बोल उठा, "आप क्या चाहते हैं?"

"कुछ नहीं।"

"तो यहाँ क्यों बैठे हैं?"

"ऐसे ही। आपका यह खिलौना मुझे अच्छा लग रहा है।"

"खिलौना!" वह हँसा और एकदम बदली हुई आवाज में बोला,

"यह वह खिलौना है, जो कुछ ही क्षणों में पूरी दुनिया को मिट्टी के ढेले की तरह बिखरा सकता है।"

मैंने उसे शक की नजर से देखा, "आप कोई बेहतर मजाक नहीं कर सकते ?"

"मजाक नहीं, यह सच है। दुनिया का सबसे भयानक सच !"

"वह क्या ?"

"यह 'स्पेस-बम' है।"

मैं कांप उठा। लगा—मौत मेरे सामने बैठी है और वह अभी—बिल्कुल अभी—हाथ बढ़ाकर मुझे दबोच लेगी।

मैं उठा और भागने की कोशिश करने लगा। पीछे से उसकी आवाज आयी, "सुनो !"

मैं ठिठक गया।

"तुम भागकर कहां जा रहे थे ?"

"मैं ? पता नहीं। कहीं भी···"

"कहीं भी जाओ, इसकी मार से बच नहीं सकते।"

मुझे लगा—जैसे मेरे आसपास की तमाम चीजों को लकुवा मार गया है। कहीं भी कोई हरकत नहीं है।

फिर वही बोला, "खड़े क्यों हो, बैठो !"

मैं सम्मोहित व्यक्ति की तरह बैठ गया और उस अजीब आदमी को टकटकी लगाकर देखने लगा।

"इस तरह क्या देख रहे हो ?" उसने पूछा।

"कुछ नहीं। यह बताइए कि आप हैं कौन ?"

"वैज्ञानिक—इस खिलौने का आविष्कारक।"

"आप !" मैंने हैरत से कहा, "लेकिन आप इस नाजुक खिलौने को यहां क्यों लिये बैठे हैं ?"

"मैं एक मजेदार खेल खेलना चाहता हूं।"

"वह क्या ?"

"मैं इसका विस्फोट करना चाहता हूं।"

"विस्फोट ?"

"हां, विस्फोट। मैं नहीं चाहता कि मेरे इस आविष्कार का इस्तेमाल कोई अपने स्वार्थ के लिए करे। इसलिए मैं खुद ही इसका विस्फोट कर देना चाहता हूं।"

"इस्तेमाल कोई और करे या आप, नतीजा तो एक ही होगा।"

"हां, होगा। मैं उस नतीजे को जानता हूं और जान-बूझकर ही इसका

विस्फोट करना चाहता हूँ।"

"वह क्यों ?"

"इसलिए कि आज जिन्दगी अनिश्चय, उत्तेजना, प्रदूषण और कभी न होनेवाले युद्ध के आतंक से इस कदर घुट गयी है कि आदमी अपनी हर सांस को अन्तिम मानकर जी रहा है।"

"लेकिन जी तो रहा है।"

"यह जीना मरने से भी बदतर है।"

"जीना है तो बदतर हो नहीं सकता। जिन्दगी के रहते कोई उसे बिगाड़ता है तो आप बना भी सकते हैं। लेकिन जब जिन्दगी ही नहीं रहेगी तो कोई बिगाड़ेगा किसे और आप बनायेंगे क्या ?"

"बनने की तमाम सम्भावनाएँ समाप्त हो चुकी हैं।"

"सम्भावनाएँ कभी समाप्त नहीं होतीं। इस बात की पूरी सम्भावना है कि कल आपके इस महान आविष्कार को आदमी अपने हित के लिए इस्तेमाल कर सके।"

वह अपने चेहरे की सख्त रेखाओं को तोड़कर मुस्कराया, "मैं तो सिर्फ यह देखना चाहता था कि इसके विस्फोट की बात सुनकर आपके ऊपर क्या प्रतिक्रिया होती है। मैं खुद तो इसका विस्फोट करूँगा ही नहीं, अब इसे किसी ऐसे हाथ में भी नहीं जाने दूंगा, जो इसका विस्फोट कर सके !"

"आप इसका विस्फोट नहीं होने देना चाहते तो यह आविष्कार किया क्यों था ?"

"आविष्कार किया नहीं, मुझसे कराया गया था। वैज्ञानिक की मजबूरी है कि वह साधनों के बिना आविष्कार नहीं कर सकता। और जो साधन जुटाता है, वह आविष्कार को अपने लिए इस्तेमाल करना चाहता है। आज तक वैज्ञानिक की प्रतिभा का उपयोग आदमी के हित के लिए कम और उस पर अत्याचार करने या फिर उसकी हत्या कर देने के लिए अधिक होता रहा है। लेकिन अब यह नहीं होगा। कतई नहीं होगा !" वह अपने खिलौने को लेकर उठा और चुपचाप एक तरफ चल दिया।

मैं कुछ देर वहीं खड़ा उसे जाते हुए देखता रहा। वह काफी दूर निकल गया तो मैं आगे बढ़ा। चलते-चलते अचानक लगा—पैरों में लड़खड़ाहट आने लगी है। नशा रंग दिखा रहा है। नशे का रंग पैरों में उतना नहीं जितना पेट में खिल रहा है।

खाना क्या आज कहीं भी नहीं मिलेगा ? मैं इसी तरह भूख से तड़पकर म जाऊँगा ? मरना तो एक दिन है ही लेकिन भूख से मरना...नहीं, मैं भू

से नहीं मरना चाहता। मरना तो किसी भी तरह नहीं चाहता। मेरे मरने से उस बेचारी को कितना दुख होगा। उसे, जो कि खाना बनाये इन्तजार में बैठी है। कितनी सीधी है! आज, जबकि सारा जमाना नदी में तैर रहा है, वह अपने घर की चारदीवारी में कैद है। कैद शायद वह नहीं। वह उन सीमाओं में रहकर भी मुक्त है और मैं पूरे शहर में भटककर भी मुक्त नहीं हूँ। बंधा हूँ। उसी से। घर तो नहीं गया लेकिन दिन-भर रह-रहकर उसी का खयाल आता रहा। यह खयाल ही तो उसकी जीत है। वह कभी भी मुझे जीतना नहीं चाहती लेकिन मैं हमेशा उससे हारता आया हूँ।

कैसा जालिम हूँ मैं! कितनी तकलीफें देता हूँ उस बेचारी को। वह सुबह से इन्तजार में बैठी है और मैं इन तमाम खुराफातों में उलझ गया। मुझे देखकर वह कितनी खुश होगी! और बच्चा? वह तो एकदम उछल पड़ेगा! पत्नी बच्चे को गोद में बैठा लेगी। प्यार के साथ एक बार उसे देखेगी और फिर ललक के साथ मुझे!

मैंने रास्ता बदला और तेजी से घर की तरफ बढ़ने लगा। ज्यों-ज्यों घर नजदीक आ रहा है, मेरे कदमों की रफ्तार तेज होती जा रही है। आज जाते ही उसे इतना प्यार करूँगा, इतना कि वह कह दे—बस, और नहीं सहा जाता!

प्यार भी नहीं सहा जाता? क्या बदतमीजी है!

कदमों की रफ्तार और तेज हो गयी। लगा—जैसे मैं चल नहीं रहा, लुढ़क रहा हूँ।

आधा रास्ता ही तय किया था कि भीतर कहीं जोर का झटका लगा।

नहीं, ऐसा नहीं हो सकता—मैंने अपने को धमकाया। लेकिन यह धमकाना जल्दी ही झूठा पड़ गया। नजदीक पहुँचने पर मैंने देखा—वे ही हैं। वे यानि मेरी पत्नी और मेरा सबसे अच्छा दोस्त। वे दोनों हाथ-में-हाथ डाले मुस्कराते चले आ रहे हैं।

मैंने अविश्वास-भरी नजर से पत्नी को देखा। वैसी ही नजर से पत्नी ने मुझे देखा और वह अपने साथी के गले में बाँहें डालकर झूल गयी। साथी ने उसे बाँह में लपेट लिया और तेजी से चुम्बन दागने लगा। थोड़ी ही देर में पत्नी बेहाल हो गयी। वह किचकिचाकर अपने साथी से लिपट गयी। साथी ने उसे जोर से भींच लिया। पत्नी ने और भी जोर से। और तभी मेरे सामने—ठीक मेरे सामने वे दोनों शरीर खुली सड़क पर एक हो गये!

कितना अच्छा हो कि मेरी आँखें मुझे धोखा दे रही हों! लेकिन मेरी उँगलियाँ पत्नी के जिस्म के एक-एक मसाम से परिचित हैं। धोखा आँखें नहीं, खुद मैं अपने को दे रहा था।

मैंने अपने मुँह पर जोर से चाँटा मारा और झटके के साथ पीछे मुड़ या।

थोड़ी दूर चलते ही मेरे पैर जाम हो गये। कुछ भी करने और कहीं भी जाने के लिए दुनिया के तमाम दरवाजे खुले पड़े हैं मगर मेरे दिमाग का दरवाजा कतई वन्द हो गया है। मेरे भीतर भयानक खालीपन भर गया है। कुछ भी अच्छा या बुरा नहीं लग रहा। सब कुछ वेस्वाद, वेरंग, वेगन्ध हो गया है।

मैं कुछ देर खड़ा सोचने की कोशिश करता रहा। कुछ भी सोच नहीं सका तो धड़ाम से पटरी पर वैठ गया।

वैठे-वैठे अचानक डॉक्टर का खयाल आ गया। वह हँसते-हंसते थक गया था और उस सदावहार हँसी को खत्म कर देना चाहता था। लेकिन मैं तो विना हँसे ही थक गया हूँ। इस भीड़भरी दुनिया में मैं अकेला हूँ—एकदम अकेला। जिन सम्वन्ध-सूत्रों से मैं उसके और फिर सवके साथ वँधा था, वे सव एक झटके से टूट गये। अव मैं पूरी तरह स्वतन्त्र हूँ—कहीं जाऊँ और कुछ भी करूँ! लेकिन जाऊँ तो किसके पास और करूँ तो किसके लिए? आदमी केवल अपने सुख से सुखी नहीं हो सकता। सुख दूसरे को दिये जाने पर ही पूर्णता प्राप्त करता है। लेकिन मैं अपना सुख किसे दूं? अव इस जिन्दगी का कोई मतलव नहीं है। इसके साथ जुड़े सवालों का भी कोई मतलब नहीं। अव तो हर सवाल का एक ही जवाव है—ऐसा जवाव, जिसके वाद कोई भी सवाल सिर नहीं उठाता।

लेकिन नहीं, वह किसी भी सवाल का जवाव नहीं। जिन्दगी ही नहीं रहेगी तो फिर कोई विगाड़ेगा किसे?

सूरज भागा जा रहा है। खुशवूदार धूप चारों तरफ फैली है। सड़क से गुजरते लोगों की चाल में उचक है। ये तमाम लोग आखिर कहाँ जा रहे हैं? ये अव तक ऊवे नहीं। नहीं ऊवे तो अव ऊव जायेंगे। और न ऊवें, इससे फर्क क्या पड़ता है! मैं भी अजीव वेवकूफ हूँ। इतनी देर से वेमकसद पटरी पर वैठा भीड़ को देख रहा हूँ। भीड़ तो आखिर वही भीड़ है।

मैं उठा और फिर सड़क पर आ गया।

नशा और गहरा गया है। अलकोहल अन्तड़ियों को मथ रही है। पे में जलन और सिर में तीखा दर्द है। वार-वार लगता है—मेरे भीतर ज कुछ है, सव वाहर आ जायेगा। लेकिन आता कुछ नहीं। अपने भीतर निकलकर वाहर की खुशनुमा दुनिया में डूवने की कोशिश करता हूँ लेकि वह दुनिया ही मेरे भीतर आकर डूव जाती है।

पेट में जलन बढ़ती जा रही है। भूख खुद को खाये जा रही है। पूरे बाजार में कहीं कुछ भी तो नहीं। बाजार में कुछ है नहीं और घर···मुझे मतली आने लगी। घर है कहाँ? चलो, यह भी अच्छा ही हुआ। एक बोझ था, उतर गया। लेकिन खाना? इतने बड़े शहर में क्या कुछ भी नहीं मिलेगा? कहीं भी? किसी भी तरह?

अचानक याद आया—शहर के बाहर एक बूचड़खाना है। वहाँ शायद कुछ मिल जाये।

मैंने फुर्ती से रास्ता बदला और चाल तेज कर दी।

बूचड़खाने में कोई नहीं था। तमाम कसाई जानवरों को हलाल करने के बजाय इनसानी जिन्दगी को हलाल करने गये हुए थे।

भूख एकदम काबू से बाहर हो रही थी। मैं कुछ भी खा जाना चाहता था। ऐसे में किसी आदमी को मारकर नहीं खाया जा सकता? लिजलिजे सवाल का कीड़ा दिमाग में रेंगा। सुना है—आदमी का गोश्त बहुत लजीज होता है। मैंने आज तक आदमी तो क्या, किसी छोटी-मोटी चिड़िया को भी नहीं मारा। जब-जब किसी बूचड़खाने के सामने से गुजरा तो यह सोच-कर परेशान होता रहा—कसाई जानवरों को कैसे मारते होंगे! कैसे मार पाते होंगे!

मैं बूचड़खाने से निकला तो सात-आठ साल का एक बच्चा जाता हुआ दिखायी दिया। मैं अन्धा होकर बाज की तरह उस पर टूट पड़ा। फिर मुझे याद नहीं कि मैंने उसे कैसे हलाल किया! याद सिर्फ इतना है कि बच्चे ने जान बचाने के लिए आखिर तक कोशिश की थी और अपने नन्हे-नन्हे हाथों से मुझे लहू-लुहान कर दिया था!

बच्चे के हलाल होते ही मैं उसकी खाल उधेड़कर चुना-चुना मांस खाने लगा। कच्चा मांस मैंने कभी नहीं खाया था। उबकाई आने लगी। लेकिन यह हलाल की कमाई थी। मैं जी कड़ा करके खाता रहा।

खाने के बाद मैं वहाँ से चला तो बच्चे का सहमा हुआ चेहरा बार-बार सामने आने लगा। मैं भीतर तक डरता चला गया। वह मेरा बच्चा था। मेरा अपना बच्चा, जिसे मैं इतना प्यार करता था! मैं नहीं समझ पा रहा कि उस वक्त मुझे क्या हो गया था! मैं ऐसी पागलपन की हरकत कैसे कर बैठा!

मेरे अपने बच्चे का मांस मेरे भीतर खलबली मचाये है। सिर बुरी तरह भन्ना रहा है। यह भी कोई जिन्दगी है! इसे जीने का मतलब? बच्चा और उसकी माँ थी तो मतलब था भी। लेकिन अब? अब किसके लिए जीना है?

तो फिर?

मुझे खयाल आया—शहर के पूरब की तरफ एक नदी वहती है और नदी के ऊपर एक ऊँचा पुल है। अब तो वह नदी ही इस जीवन को कोई अर्थ दे सकती है—या फिर तमाम अर्थों को ले सकती है। मैं तेजी से नदी की तरफ बढ़ गया।

वच्चे का कच्चा मांस मेरे भीतर खलवली मचाये है। वार-वार उवकाई होने को होती है। लेकिन होती नहीं। सिर फटा जा रहा है। मैं न जाने क्या-क्या सोचना चाहता हूँ लेकिन कुछ भी सोच नहीं पा रहा। सिर्फ एक वात जहन में है कि शहर के पूरब में एक नदी वहती है और वह नदी मुझे पुकार रही है। मैं 'रोवो' की तरह मशीनी गति से नदी की तरफ वढ़ा जा रहा हूँ।

वच्चे का मासूम चेहरा वार-वार सामने आता है और वह मुझे कई तरह से काट जाता है। मेरे भीतर एक भयानक लड़ाई चल रही है। चलते-चलते लगा—अव मैं आगे नहीं चल सकूँगा।

वायें हाथ पार्क था। मैं उसमें घुसा और दरवाजे के पास ही घास पर टिक गया। पैर पूरी लम्वाई में फैला दिये और अघाये मगरमच्छ की तरह शरीर ढीला छोड़कर पूरी तरह पसर गया।

सूरज दम तोड़ रहा है। शहर सलेटी अँधेरे में डूवता जा रहा है। वत्ती जलाने का समय हो गया। लेकिन आज वत्ती जलाये कौन ?

सलेटी अँधेरा साँवला होता जा रहा है। लोगों की चाल लड़खड़ाने लगी है। शहर जहाँ-तहाँ कपड़े उतारने लगा है। भीड़ें जोड़ में विखरनी शुरू हो गयी है।

जोड़ों की भीड़ को देखकर मैं और भी अकेला हो गया। एकदम अकेला। लगा—मैं किसी सुनसान जंगल में भटक गया हूँ और अँधेरा उतर आया है। अँधेरे में जंगल की झाड़ियाँ भी डराने लगती हैं।

मेरे चारों तरफ झाड़ियाँ फैली हैं। मैं उन्हें देखकर काँप रहा हूँ—बुरी तरह काँप रहा हूँ। चीखना चाहता हूँ लेकिन मेरी चीख सुनेगा कौन ?

सड़क पर निगाह गयी तो एक ऐसा चेहरा आता दिखायी दिया, जो मेरी चीख सुन सकता था।

मैं चीख उठा।

लड़की वापस मुड़ी और मेरे सामने आकर खड़ी हो गयी। उसके माथे पर वही प्रश्न-चिह्न लगा था।

"वैठो !"

वह वैठी नहीं, मुस्कराने लगी—उसके होंठों पर विष छलक आया।

"बैठ जाओ !" मैंने उतावले शब्दों में कहा, "अब मेरा कोई घर नहीं है !"

लड़की नीचे खिसक आयी, "नहीं है ?"

"हाँ, नहीं है।"

"क्या हुआ ?"

"वह बाजार बन गया।"

लड़की मेरे पास सरक आयी। मैंने उसके माँस की छुअन अपने पूरे जिस्म पर महसूस की।

लड़की फिर मुस्करायी।

मैं नहीं मुस्करा सका। शायद मैं मुस्कराना भूल चुका था।

लड़की ने अपनी गर्म हथेली मेरे ठण्डे हाथ पर रख दी।

मैंने अपना दूसरा हाथ उसके हाथ पर रख देना चाहा। लेकिन हाथ उठा नहीं।

मैं झुंझला उठा। इतने दिन से तो इसके सपने देखता रहा हूँ और आज सामने बैठी है तो मुझे एकदम लकुवा मार गया !

लड़की की गर्म हथेली और गर्म होती जा रही है। लेकिन मेरे भीतर अभी भी बर्फ़ जमी है। आदमी एक बार प्यार करके हमेशा-हमेशा के लिए प्यार करना भूल जाता है। फिर हर बार वह भूले हुए प्यार के सबक को याद करना चाहता है। लेकिन चाहने से यह सबक···

"तुम क्या सोचने लगे ?"

"कुछ नहीं।"

"फिर घर ?"

"नहीं, अब कोई घर नहीं !"

लड़की आग की लपट की तरह दहक उठी।

मेरे भीतर की बर्फ़ पिघलने लगी। मैंने उसे पकड़कर अपनी तरफ़ खींच लिया।

लड़की का शरीर मेरी बाँहों में आकर थम गया है। आँखें आँखों से जुड़ी हैं। ऐसी आँखें किसकी थीं ? उसी की तो—उसी कम्बख्त की ! न जाने वे आँखें अब कहाँ होंगी ! न जाने फिर कभी उन आँखों को देख भी सकूँगा···

लड़की कसमसायी "तुम फिर सोचने लगे ?"

"नहीं !" मैंने चौंककर कहा और लड़की को कसकर भींच लिया। मेरे भीतर की बर्फ़ पूरी तरह पिघल गयी। गर्म खून फुफकारने लगा।

लड़की बल खाकर नागिनी की तरह मुझसे लिपट गयी। उसका शरीर

भभक रहा था। मैंने अपने तमाम अंगों को इस भभक के ऊपर दाग दिया।

लड़की का शरीर लहर की तरह उभरा और उभरता गया। उभरता ही गया।

अचानक समय थम गया। कुछ क्षणों तक वैसे ही थमा रहा।

समय ने साँस ली तो टूटी हुई लहर मेरी बाँहों में पड़ी थी।

थोड़ी देर बाद हम उठे और एक-दूसरे के हाथ-में-हाथ डालकर भीड़ के समुद्र की ओर बढ़ने लगे। चलते-चलते उसने एक बार फिर प्रश्नमयी नजर मेरी तरफ उठायी। गोया पूछ रही हो—यह सब क्या है?

मैंने उत्तर भी नजर से ही दिया—जानना। सम्पूर्णता में जानना।

और मैं? मैं फिर अपने में लौट आया। मुझे नहीं मालूम वह खालीपन कब और कैसे, कहाँ गायब हो गया! मुझे लग रहा था— मेरी भी कोई ताकत है और वह ताकत मेरे साथ-साथ चल रही है!

साँवला अँधेरा स्याही में डूब गया है और स्याह अँधेरे को चीरता मशालों का लम्बा जुलूस चला आ रहा है। आगे-आगे कुछ लोग सधे कदमों से चल रहे हैं। उनके पीछे सैनिक टुकड़ी है। सैनिकों की कतारें लम्बी-से-लम्बी होती जा रही हैं। मशालों की रोशनी में उनके चेहरे दिपदिपा रहे हैं। संगीनों की नोकें चमक रही हैं। सख्त कदमों की थाप एक साथ धरती को दहलाती है और फौरन बाद दूसरी थाप। समवेत संगीत पूरे आकाश में भरा है।

मैं लड़की का हाथ थामे सड़क के किनारे खड़ा जुलूस को देख रहा हूँ।

बहुत देर तक सैनिक टुकड़ियाँ गुजरती रहीं—गुजरती रहीं। फिर जुलूस में तरह-तरह के लोग दिखायी देने शुरू हो गये। उनमें से बहुत-से चेहरों को मैं पहचानता हूँ। कुछ तो आज दिन में ही मिले थे। वे सब सख्त कदमों से आगे बढ़ रहे हैं। ये तमाम लोग कहाँ जा रहे हैं? क्यों जा रहे हैं?

मशालों की कतार दूर-दूर तक झमझमा रही है। हम दोनों जुलूस के खत्म होने के इन्तजार में खड़े हैं और जुलूस है कि खत्म होने का नाम ही नहीं लेता। पूरा शहर—शहर ही नहीं, पूरा देश बल्कि पूरी दुनिया इस जुलूस में शामिल हो गयी है···

अचानक मेरे सामने एक धुंधला-सा धब्बा हिलता दिखायी दिया। तभी वह तेज रोशनी कौंधी और धब्बा तिड़ककर एक तरफ जा गिरा। उसके पीछे से वही दहकती आँखें उभर आयीं। आँखें मुझे घूर रही हैं। घूरे जा रही हैं। भीतर तक घूरे जा रही हैं।

मैं दौड़ने लगता हूँ।

आँखें और भी तेजी से घूमने लगती हैं। लगता है—मैं उनकी चुभन को और ज्यादा बरदाश्त नहीं कर सकूँगा। अभी—बिल्कुल अभी—बेहोश हो जाऊँगा। इससे तो अच्छा है—मैं बेहोश ही हो जाऊँ···

लेकिन मैं बेहोश हो पाता, उससे पहले ही आँखें बहुत जोर से चमकीं और खिलखिलाकर गायब हो गयीं।

मेरा पूरा शरीर उसी तरह काँपता रहा।

मैं आँखों के घूरने की घुटन से पूरी तरह उबर नहीं पाया था कि चौड़े चेहरे और तीखे नक्शवाली एक औरत सामने आ खड़ी हुई। आकार में मुझसे कम-से-कम चौगुनी। उसके होंठों पर ताजे खून की लिपस्टिक लगी थी और मुँह से लहू के थक्के निकल रहे थे।

औरत को देखते ही लड़की बुरी तरह घबरा गयी। उसने मेरे हाथ को अपनी उँगलियों के शिकंजे में जकड़ लिया। नहीं मालूम उसके हाथ में इतनी ताकत कहाँ से आ गयी!

औरत ने शांत अन्दाज से बायीं आँख दबायी और फटे हुए स्वर में मुझसे कहा, "मैं तुम्हें प्यार करती हूँ।"

"मुझे?"

"हाँ, और तुम भी मुझे।" औरत ने आत्मविश्वास के साथ कहा, "तुम्हीं क्या, मुझे सभी प्यार करते हैं। जब ये तमाम लोग एक-दूसरे से ऊब जायेंगे, जब इनके पास कहीं भी जाने के लिए जगह नहीं बच रहेगी तो ये आखिर मेरे पास ही आयेंगे। लेकिन ये तो जब आयेंगे, तब देखा जायेगा। इस वक्त तो तुम्हारी बारी है।" कहकर वह औरत पूरी-की-पूरी एक साथ मेरी तरफ बढ़ी।

लड़की मेरा हाथ छोड़कर तेजी से भाग खड़ी हुई।

मैं फिर अकेला रह गया।

वह लगातार और भी खूँखार नजर आने लगी।

मैं पीछे-ही-पीछे हटने लगा। हटता रहा। उसके और मेरे बीच फासला-फासला कम होते ही मैं फुर्ती से घूमा और भाग खड़ा हुआ।

वह मेरे पीछे भागी।

मैं पूरी ताकत से दौड़ने लगा।

वह और भी तेजी से पीछा करने लगी। लगा—जैसे कोई आँधी मुझे दबोचने चली आ रही है···

अचानक पूरा मार्केट चीखों से भर गया। मैंने पलटकर देखा—एक विराट-काय मशीन सड़क पर तैरती चली आ रही है। मशीन का वाहरी ढांचा वहुत ही आकर्षक है। देश के सबसे प्रसिद्ध चित्रकार ने उसे सजाया है। वह नजर को तेजी से अपनी तरफ खींचती है। देखते ही एक जादूभरा सम्मोहन छा जाता है। लेकिन जैसे-जैसे मशीन नजदीक आती जा रही है, लोग चीखते हुए इधर-उधर भाग रहे हैं। मैं कुछ भी नहीं समझ पाता। तभी मैंने देखा कि बहुत-से लोग मशीन की तरफ खिचे जा रहे हैं। उनका मुंह दूसरी तरफ है और वे पैरों से चले बिना ही तेजी से मशीन की तरफ खिच रहे हैं। खिचते समय उनकी मुखाकृतियां बिगड़ जाती हैं।, लगता है—वे चीखना चाहते हैं लेकिन चीख नहीं पाते। वे खिचकर मशीन की तरफ जाते हैं तो मशीन दूर से ही उन्हें फांक लेती है।

मशीन अभी फासले पर थी कि मैं भागकर एक तंग गली में घुस गया।

दनदनाती हुई मशीन आगे निकल गयी।

मुझे लगा—मशीन की जद से बचकर भी मैं बच नहीं सका हूं। मेरे भीतर कुछ था, जिसे मशीन खींच ले गयी है। एक अजीब किस्म का खौफ मुझ पर तारी हो गया। आखिर इस मशीन से मैं कब तक बच सकूंगा? कोई भी कब तक बच सकेगा?

कैसी मशीन है यह! वाहर से देखने में जितनी आकर्षक, भीतर से उतनी ही भयानक! आदमी सम्मोहित होकर इसकी तरफ खिचता है और खिचकर नजदीक पहुंचता है तो···लगता है—मशीन में कोई ऐसा चुम्बक लगा है, जो लोहे को नहीं, आदमी को अपनी तरफ खींचता है। जो कोई भी चुम्बक की जद में आ जाता है, खुद-ब-खुद खिचा चला जाता है।

मशीन जहां-जहां से गुजरी, सड़क को बुहारती चली गयी। आसपास के तमाम लोग उसके विराट पेट में समा गये। सड़क पर या पार्क के किनारे लेटी बहुत-सी मिथुन-मूर्तियां जैसी थीं, वैसे ही खिचती चली आयीं और मशीन के निकट पहुंचीं तो वह उन्हें ज्यों-की-त्यों निगल गयी।

मशीन ने पूरे सेण्ट्रल-मार्केट का चक्कर लगाया और ब्रॉडवे को रौंदती सीधी रॉकी के सदर दरवाजे में दाखिल हो गयी।

मैं पागल की तरह खड़ा देर तक खाली सड़क को घूरता रहा!

अचानक मशीन की आवाज फिर सुनायी दी। मैं चौंका। मुड़कर देखा—खूबसूरत मशीन सड़क को रौंदती चली आ रही है और उसी तरह लोगों को फांक रही है।

पेट में जलन हो रही है और सिर भारी हो गया है। कुछ भी अच्छा या बुरा नहीं लग रहा…

अचानक किसी ने मेरे दिमाग का स्विच ऑफ कर दिया। सोच के सारे सूत्र झटका खाकर टूट गये। मस्तिष्क की शिराओं का रक्त जम गया। तभी मेरे पैर जमीन से उखड़ गये। मैंने किसी तरह पैर दोबारा टिकाने और भाग निकलने की कोशिश की। लेकिन तभी मेरा शरीर पूरी तरह हवा में झूल गया। मैं जिस तरफ भागना चाहता था, उसके ठीक दूसरी तरफ तेजी से खिंचने लगा। कोई रहस्यमय शक्ति मेरे शरीर को ही नहीं सम्पूर्ण चेतना को खींचे ले रही है। खींचने की रफ्तार हर पल बढ़ती जा रही है। मेरे भीतर एक भयानक चीख उठी और भीतर ही घुटकर रह गयी। तभी गड़ाक् की आवाज हुई और मशीन मुझे पूरे-के-पूरे को एक साथ फांक गयी।

अब मैं जहां हूँ, वहां सिवाय अन्धकार के कुछ नहीं है।

मशीन की खींच से पूरा शरीर थरथरा उठा है और वह पके फोड़े की तरह टीस रहा है। अन्धकार में मैंने अपने को और अपने आसपास को पहचानने की कोशिश की। लेकिन पहचान का कोई साधन यहां नहीं है। मुझे मालूम है कि मुझ-जैसे ही और लोग भी यहां हैं। एक शरीर तो ठीक मेरे साथ सटा है। पता नहीं वह शरीर किसका है? नर है या मादा? उसमें कोई हरकत नहीं है। लगता है—वह शरीर नहीं, मांस की गठरी है। यहां जितने भी शरीर हैं, सब मांस की गठरी बने पड़े हैं। कोई भी किसी तरह की हरकत या आवाज नहीं कर रहा। सब बुरी तरह सहमे हैं। मैं उनमें से किसी को भी नहीं जानता, लेकिन ऐसा भी नहीं लगता कि वे पराये हैं। उनके और मेरे बीच एक अजीब रिश्ता है—दहशत का रिश्ता!

इन तमाम लोगों को क्यों पकड़ा गया है? अब इन सबका क्या होगा? क्या यह उन्मुक्तता-दिवस इसीलिए मनाया जा रहा है कि एक बार सब खुलकर खेल लें और फिर एक-एक कर सबको कैद कर लिया जाये!

खूबसूरत मशीन उस अंधेरे को और अंधेरे में बन्द मांस की गठरियों को खींचती धीरे-धीरे आगे बढ़ रही है। कुछ देर वह उसी तरह चलती रही। फिर झटका खाकर रुक गयी।

मशीन ने हमें एक बड़े दफ्तर के दरवाजे पर कूड़े की तरह उलट दिया।

काफी देर बाद रोशनी और धूप दिखायी दी। अच्छी लगी। लेकिन तभी दरवाजे का फर्श अन्दर को खिसका और शटर खटाक से बन्द हो गया।

अब वहाँ फिर वही अँधेरा था। फिर वही सहमापन।

मुझे नहीं मालूम कि वहाँ कितने सहमे हुए लोग बन्द हैं ! यह भी नहीं मालूम कि इन्हें क्यों बन्द किया गया है ! आखिर इन सबका होगा क्या ? इन्हें जिन्दगी के आखिरी लम्हे इस दहशत-भरे अँधेरे में ही पूरे करने होंगे या ये फिर कभी सूरज की किरण भी देख सकेंगे !

मैं जहाँ कहीं था, वहीं फर्श पर पसर गया और आनेवाले काले क्षणों का इन्तजार करने लगा।

अचानक तलघर में गहरी लाल रोशनी फैल गयी। रोशनी की चकाचौंध में मैंने देखा कि तलघर में मैं अकेला हूँ—एकदम अकेला। मेरे साथ आये उन लोगों का क्या हुआ ? क्या हुआ उन बेचारों का ? उन्हें कहाँ ले जाया गया है ? मुझे उनके साथ क्यों नहीं ले जाया गया ? यहाँ अकेला क्यों छोड़ दिया गया है ?

अँधेरे में बराबर अहसास बना रहा था कि मुझ जैसे और भी बहुत-से लोग वहाँ हैं, इसलिए उतना डर नहीं लग रहा था। लेकिन अब, अपने को अकेला पाकर रोशनी के बावजूद मैं डर से काँप उठा--भीतर तक काँप उठा !

"घबराओ नहीं।" एक रहस्यमय भारी आवाज पूरे तलघर में गूंज गयी।

यह आवाज कहाँ से आ रही है ? किसकी है ? क्या उसी की ? उसकी आवाज ! इस आवाज के बल पर ही वह इतना शक्तिशाली बना हुआ है ?

"घबराओ नहीं !" आवाज एक बार फिर गूंज उठी, "तुम सुरक्षित हो !"

घबराहट कम नहीं हुई और बढ़ गयी।

मैंने सहमकर इधर-उधर देखा। आखिर आवाज आ कहाँ से रही है ? कुछ भी समझ नहीं सका। भारी आवाज पूरे तलघर में भरी है और मेरे प्राण सूखते जा रहे हैं। अब क्या होगा ? क्या होगा अब ?

अचानक खटखट की एक और आवाज सुनायी दी।

मैं चौंका। मुड़कर देखा—सामने से एक रोबो दनदनाता चला आ रहा है। पास आते ही उसने मेरी कलाई अपने सख्त पंजे में पकड़ ली और जिस तरफ से आया था, मुझे लेकर उसी तरफ चल दिया।

पूरा तलघर पार करके हम दूसरे सिरे पर पहुँचे तो सामने की दीवार

मे एक दरवाजा खुल गया। दरवाजे से हल्की नीली रोशनी आ रही थी। अच्छी लगी। लेकिन मैं यह नहीं समझ सका कि इतनी प्यारी रोशनी यहां आयी कैसे ? जरूर इसके पीछे भी कोई रहस्य है। फूल में छिपे मोर जैसा रहस्य।

रोबो ने मुझे दरवाज़े पर लाकर छोड़ दिया।

तभी आवाज एक बार फिर गूंज उठी, "चलो, अन्दर चलो !"

अन्दर ? वहां न जाने और क्या हो ! मैं अन्दर नहीं जाना चाहता लेकिन आवाज के हुक्म को टालने की हिम्मत मुझमें नहीं है।

मशीन से बातें

[कमरा काफी बड़ा है लेकिन उसमें लगी अजीबोगरीब मशीनों के कारण उतना बड़ा नहीं लग रहा। कमरे के बीचोबीच एक बहुत बड़ी मेज है, जिस पर तरह-तरह के यन्त्र लगे हैं। मेज के चारों तरफ अपेक्षाकृत छोटे आकार की मशीनें रखी हैं। दायीं तरफ की दीवार के साथ कई कम्प्यूटर लगे हैं, जो बराबर काम में व्यस्त हैं। सामने की दीवार पर कमरे की पूरी लम्बाई के आकार का टेलिस्क्रीन लगा है।

मैं सहमे हुए कदमों से कमरे में दाखिल होता हूँ, और अपने को टेलिस्क्रीन के सामने पाकर काँप उठता हूँ। तभी रहस्यमय भारी आवाज सुनायी देती है।]

आवाज : मैं तुम्हारा स्वागत करता हूँ। आओ, बैठो!

[मैं इधर-उधर देखता हूँ। समझ में नहीं आता कि वहाँ बैठने की जगह कौन-सी है!]

आवाज(हँसी के साथ) : अरे! मेज के चारों तरफ कुर्सियाँ ही तो रखी हैं। आराम से बैठो!

[मैं आगे बढ़ता हूँ और आश्चर्य के साथ देखता हूँ कि मेज के चारों तरफ जो मशीनें रखी हैं, उनमें बैठने की जगह भी है। मैं डरते-डरते उनमें से एक पर अपने को टिका देता हूँ। कुर्सी बहुत ही आरामदेह है। मैं राहत महसूस करता हूँ। मेरे बैठते ही कुर्सी और मेज पर लगे यन्त्रों में सनसनाहट होने लगती है। मैं घबरा जाता हूँ।]

आवाज : घबराओ नहीं। मैं वादा करता हूँ कि यहाँ कोई तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकता। और जब मैं वादा करता हूँ तो उसका कुछ मतलब होता है।

मैं : (क्या मतलब होता है? मेरी तो कुछ समझ में नहीं आ रहा!)

आवाज : आ जायेगा। सबकुछ आ जायेगा। मैंने तुम्हें कुछ जरूरी बातें करने के लिए बुलाया है।

मैं : (यह मुझसे क्या जरूरी बातें कर सकता है ?)

आवाज . बहुत ही जरूरी बातें।

[मैं चौंकता हूँ।]

आवाज : मुझे मालूम है कि तुम्हारे मन में मुझे लेकर कई उलझनें हैं। आज तुम उन तमाम उलझनों को दूर कर सकते हो। तुम्हारे मन मे जो भी सवाल उठें, उन्हें बेझिझक पूछो। जो सवाल तुम्हें ऐसे लगें, जिन्हें कि नही पूछना चाहिए, उन्हें जरूर पूछो। वे सवाल और उनके जवाब हमारी बातचीत का सबसे अहम हिस्सा होंगे।

मैं : (कही यह मुझे फँसा तो नही रहा ?)

आवाज : फँसे हुए तो तुम पहले ही हो !

[मैं फिर चौंकता हूँ।]

आवाज : घबराओ मत। बिल्कुल मत घबराओ ! तुम्हें मुझसे कुछ भी छुपाने की जरूरत नहीं। छुपाना चाहोगे तो छुपा नही सकते। मैं तुमसे दूर बैठे हुए भी तुम्हे पूरी तरह देख रहा हूँ। टेलिस्क्रीन तुम्हारी शारीरिक हरकतों और मुखाकृति को ही नही, तुम्हारे मस्तिष्क मे उठनेवाले विचारों और सूक्ष्म सवेगो को भी मुझ तक पहुँचा रहा है। इसके द्वारा मुझे फौरन पता चल जाता है कि तुम क्या सोच रहे हो और क्या महसूस कर रहे हो। सिर्फ एक बात का पता मुझे नही चल पाता कि तुम भविष्य मे क्या सोचोगे !

[मेरे पैर काँपने लगते हैं और पूरे शरीर से पसीना छूटने लगता है।]

आवाज : अरे ! तुम्हें हो क्या गया ! मैंने तो तुम्हें मजबूत दिल का आदमी समझा था। लेकिन कोई बात नही, पहली बार यहाँ आने पर सभी की ऐसी हालत हो जाती है। विश्वास रखो, यहाँ तुम्हें किसी भी तरह का नुकसान नही पहुँच सकता; बल्कि एक बड़ा फायदा होनेवाला है। घबराहट छोड़ो और जो कुछ मन मे आये, वही पूछो। मैं तुम्हारे किसी भी सवाल का बुरा नही मानूंगा और हर सवाल का खुले मन से जवाब दूंगा। हाँ, तो पूछो क्या पूछना चाहते हो ?

मैं : (साहस बटोरकर काँपते हुए स्वर मे) - मुझे'' मुझे यहाँ क्यो लाया गया है ?

आवाज : मुझे मालूम है कि तुम्हें यहाँ इस तरह आना बुरा लगा है। लेकिन तुम्हें यह जानकर खुशी होनी चाहिए कि तुम मेरे लिए बहुत महत्त्वपूर्ण व्यक्ति हो।

मैं : महत्त्वपूर्ण व्यक्ति और मैं ?

आवाज : हाँ, तुम। केवल तुम। मैं अपनी जिन्दगी के सबसे अद्भुत

और सबसे महान कार्य में तुम्हारा सहयोग चाहता हूँ।

मैं (आश्चर्य के साथ) : क्या है वह महान कार्य ?

आवाज : बताऊँगा। यही नहीं, मैं तुम्हें अपने बारे में कुछ ऐसी बातें भी बताऊँगा जो कि कोई भी नहीं जानता।

मैं : (यह मेरे ऊपर इतना मेहरबान क्यों हो रहा है ? जरूर इसमें कुछ भेद है !)

आवाज : भेद आज तक था। लेकिन आज तुम्हारे सामने सारा भेद खुल जायेगा। आज जो उन्मुक्तता-दिवस मनाया जा रहा है, इसका भी उस कार्य के साथ गहरा सम्बन्ध है। तुम जानते हो यह उन्मुक्तता-दिवस क्यों मनाया जा रहा है ?

मैं : नहीं।

आवाज : कोई बात नहीं, अभी जान जाओगे। असल में मेरे ऊपर तरह-तरह की जिम्मेदारियाँ हैं। इन जिम्मेदारियों में लोगों की जरूरतें पूरी करने की जिम्मेदारी भी है। मैं उनकी तमाम जरूरतों को जानता हूँ। उन जरूरतों को भी, जिन्हें कि वे खुद भी नहीं जानते।

मैं : जिन जरूरतों को वे खुद नहीं जानते, उन्हें आप कैसे जान लेते हैं ?

आवाज : अपने भविष्य विभाग द्वारा। इस विभाग का काम है—विज्ञान के विकास की सम्भावनाओं को ध्यान में रखते हुए, लोगों की भविष्य में पैदा होनेवाली जरूरतों की खोज करना।

मैं : ऐसी खोज से क्या फायदा ?

आवाज : खोज के बाद लोगों को बताया जाता है कि उनकी क्या-क्या जरूरतें हैं। फिर मेरी बड़ी-बड़ी कार्पोरेशनें उन जरूरतों को पूरी करने में जुट जाती हैं।

मैं : इन सब बातों का उन्मुक्तता-दिवस से क्या ताल्लुक है ?

आवाज : सीधा ताल्लुक है। मेरे भविष्य विभाग की सिफारिश थी कि लोगों की जिन्दगी में बहुत घुटन है। तरह-तरह के दबाव उनके ऊपर हैं। वे इन दबावों से मुक्त होना चाहते हैं। मुक्त होना उनकी जरूरत है।

मैं : मुक्त होना 'जरूरत' है ?

आवाज : हाँ, यह इन्सान की सबसे बड़ी जरूरतों में से एक है। लोगों का यह महसूस करना कि वे घिर और दब गये हैं, मुक्त होने की वांछा को जन्म देता है। यह वांछा किसी समय मेरे लिए खतरा बन सकती है। इस-लिए बेहतर है कि लोग समझें कि वे मुक्त हैं और जो कुछ भी कर रहे हैं, अपनी मरजी से और अपने लिए कर रहे हैं। लोगों को यह अहसास कराने

के लिए ही मैंने उन्मुक्तता-दिवस का आयोजन किया है।

मैं : लेकिन इस आयोजन से तो बहुत खतरनाक स्थितियाँ पैदा हो गयी हैं।

आवाज : मैं जिन्दगी-भर खतरनाक खेल खेलता रहा हूँ। आज का उन्मुक्तता-दिवस भी एक ऐसा ही खेल है।

मैं : लेकिन इस खेल से तो पूरे समाज में अराजकता फैल जायेगी।

आवाज : यह ठीक ही होगा।

मैं : वह कैसे ?

आवाज : अराजकता फैल जाने से लोगों को पता चल जायेगा कि मैंने जो व्यवस्था कायम कर रखी है, और जिसका वे विरोध करते रहे हैं, वह उनके लिए कितनी जरूरी है !

मैं : पता तो चल जायेगा लेकिन आज जिस तरह खुली सड़क पर लूट, हत्या और बलात्कार हो रहे हैं, उसका उन्हीं लोगों पर क्या असर पड़ेगा ?

आवाज : बहुत अच्छा असर। इस तरह लोगों का सारा गुस्सा कीमती चीजों और खूबसूरत लड़कियों पर उतर जायेगा और मैं उससे बच जाऊँगा।

मैं : लेकिन इससे तो एक ही दिन में समाज का पूरा नैतिक ढाँचा टूट जायेगा।

आवाज : यही तो चाहता हूँ।

मैं (आश्चर्य के साथ) . वह क्यों ?

आवाज : पूरा समाज अनैतिक हो जायेगा तो लोगों का ध्यान मेरे उन कामों की तरफ नहीं जायेगा, जिन्हें वे अनैतिक समझते हैं !

मैं : क्या मतलब ?

आवाज मतलब यह कि मैं किसी सुन्दर लड़की का अपहरण करवा-कर उसके साथ बलात्कार करना चाहूँ तो ऐसा करने से पहले उस इलाके में किसी का कत्ल करवा देता हूँ। जब चारों तरफ कत्ल की गरम खबर फैली होती है तब अपहरण की मामूली घटना की तरफ किसी का ध्यान नहीं जाता। इस तरह मैं एक गलती को, दूसरी उससे बड़ी गलती के सहारे सही साबित करता रहा हूँ।

मैं . साबित करने से क्या होता है ? असलियत तो फिर भी अपनी जगह रहती है।

आवाज : असलियत का सही और गलत से क्या ताल्लुक ? शेर को भूख लगती है तो वह हिरण को मारकर खा जाता है। यह एक असलियत है। बताओ, इसमें क्या सही और क्या गलत ? हिरण के लिए सोचें तो यह

गलत लग सकता है। लेकिन शेर के लिए सोचें तो ?

मैं : तो आप जंगल का क़ानून मनुष्यों पर लागू करना चाहते हैं ?

आवाज : मैं न चाहूं तो भी वह तो होगा। मेरे पास इतनी शक्ति है कि वह मुझे अनायास ही शेर बना देती है। बाकी लोग हिरण बने रहना चाहते हैं तो उनके लिए मैं क्या कर सकता हूं ?

मैं : वे हिरण बने रहना चाहते हैं या आप उन्हें बनाये रखना चाहते हैं ?

आवाज : मैं तो चाहूंगा ही। लेकिन किसी के बनाये रखने से कोई रहता है ? कल लोग हिरण बनने से इनकार कर दें तो मेरी सारी शक्ति भी उन्हें रोक नहीं सकेगी !

मैं : (अजीब आदमी है। इसकी हर बात रहस्यमय है। वैसी ही रहस्यमय, जैसाकि इसका जीवन। इसके पास इतनी शक्ति और इतने साधन हैं, तो भी यह गुप्त रहकर अपराधियों-जैसा जीवन क्यों बिताता है ?)

आवाज : (हँसी के साथ) : अपराधियों जैसा जीवन ? हाँ, सचमुच वैसा ही। मैं चाहता हूँ कि लोगों के लिए मैं हमेशा रहस्यमय बना रहूं। वास्तविकता को जानकर लोग खुश या नाराज हो सकते हैं, जबकि रहस्य बने रहने पर केवल उत्सुक। मैं अपने बारे में लोगों की उत्सुकता को समाप्त नहीं होने देना चाहता।

मैं : सिर्फ लोगों की उत्सुकता को बनाये रखने के लिए इस तरह का एकान्त जीवन बिताना कहाँ तक उचित है ?

आवाज : कोई भी स्थिति हर समय और हर किसी के साथ उचित नहीं होती।

मैं : जब आपने एकान्त में रहने का फैसला किया तो उसका कोई न कोई कारण तो रहा ही होगा ?

आवाज : फैसला मैंने किया नहीं, मुझे करना पड़ा था। उन दिनों मैं चारों तरफ से घिर गया था। तरह-तरह के दबाव मेरे ऊपर थे—आर्थिक और सामाजिक, राजनैतिक और कुछ एकदम व्यक्तिगत ! एक अजीब किस्म की अति-व्यस्तता और उससे उपजी भयानक उत्तेजना हर समय तारी रहती। ऐसे में जिन्दा रहने का एक ही उपाय था कि मैं अपने को सबसे काट लूं और एकान्त में चला जाऊं।

मैं : एकान्त में पहुंचकर आपको शान्ति मिल गयी ?

आवाज : नहीं। लेकिन शान्ति मैं चाहता भी नहीं।

मैं : वह क्यों ?

आवाज : इसलिए कि अशान्ति मेरे जीने की जरूरी शर्त बन गयी है।

मैं : आपके बारे में दुनिया के तमाम अखबार तरह-तरह की अफवाहें फैलाते रहते हैं। आप उनका प्रतिवाद क्यों नहीं करते ?

आवाज : क्यों करूं, जबकि अफवाहें मैं ही फैलवाता हूँ !

मैं (आश्चर्य के साथ) : आप ?

आवाज : हाँ !

मैं : वह क्यों ?

आवाज : इसलिए कि अफवाहें मुझे और अधिक रहस्यमय बनाती हैं। मेरी मृत्यु की अफवाह फैलती है तो पूरी दुनिया में सन्नाटा छा जाता है। शायद कुछ लोग खुश भी होते हों। लेकिन कुछ ही दिन बाद मेरे जिन्दा होने की अफवाह फैलती है तो लोग चकित रह जाते हैं। सैकड़ों बार ये अफवाहें फैल चुकी हैं और लोगों ने दोनों तरह की अफवाहों पर विश्वास करना छोड़ दिया है। अब मैं किसी दिन सचमुच मर जाऊँ तो भी लोग विश्वास नहीं करेंगे और मैं उनके लिए हमेशा जिन्दा बना रहूँगा।

मैं : आपकी इस रहस्यमय जिन्दगी का लक्ष्य क्या है ?

आवाज : सत्ता पर अधिकार करना—शासन करना।

मैं : लेकिन हमारे देश में तो लोकतन्त्र है। जनता जिस दल का शासन चाहती है, उसे ही चुन लेती है। वास्तविक शासन तो जनता का है।

आवाज : (हँसी के साथ): जनता का शासन ! यह अच्छा है कि जनता समझती रहे कि वह खुद अपने ऊपर शासन कर रही है। इसीलिए मैं लोकतन्त्र का मजेदार खेल खेल रहा हूँ।

मैं (आश्चर्य के साथ) : खेल ?

आवाज : हाँ, यह खेल ही है। खेल में दो या अधिक दलों की जरूरत पड़ती है इसलिए मैंने और मेरे प्रतिद्वन्द्वी दूसरे धनपतियों ने अलग-अलग राजनैतिक दल खड़े कर रखे हैं। जनता उनमें से कभी एक को तो कभी दूसरे को अपना दल समझती रहती है, जबकि असलियत यह है कि उनमें से कोई भी जनता का नहीं। सभी लोकतन्त्रीय दल एक न एक बड़े धनपति की ताकत पर जिन्दा हैं, और वे जिसकी ताकत पर जिन्दा हैं, उसी के हैं। अर्थ-सत्ता ही राज-सत्ता की निर्णायक है। इस देश का राजनैतिक ढाँचा ऐसा बन गया है कि वही व्यक्ति सर्वोच्च सत्ता में आ सकता है, जिसके पास अपार धन हो। हालाँकि संविधान में हर नागरिक को समान अवसर दिये गये हैं। लेकिन यह कोरा भ्रम है। हमारी दल-प्रणाली और चुनाव-प्रणाली इतनी महँगी और इतनी पेचीदा है कि बेचारा साधारण नागरिक सत्ता में आने की बात सोच भी नहीं सकता।

मैं : सोच क्यों नहीं सकता। एक समय तो आप भी साधारण नागरिक ही थे और आज सर्वोत्तम सत्ता के स्वामी हैं।

आवाज : जब तक मैं साधारण नागरिक रहा, तब तक मैं भी सत्ता में आने की वात नहीं सोच सकता था। लेकिन आज अर्थ-सत्ता मेरे हाथ में है तो मैं एकान्त में रहते हुए भी पूरे देश पर, वल्कि दुनिया के एक वड़े हिस्से पर शासन कर रहा हूं!

मैं : तो फिर जनता का शासन!...

आवाज : धोखा है। जनता मूर्ख है, इसीलिए धोखे में आ जाती है।

मैं : जनता मूर्ख है?

आवाज : हां, वह मूर्ख न हो तो कोई भी उस पर शासन नहीं कर सकता। वैसी स्थिति में शासन की जरूरत ही न रहे। लेकिन जरूरत अभी है। जनता चाहती है कि कोई उसके ऊपर शासन करनेवाला हो, इसीलिए मैं इस भूमिका को निभा रहा हूं। और दुनिया का सबसे प्रभावशाली व्यक्ति बना हुआ हूं। मैं जो चाहूं, वही कर सकता हूं। चाहूं तो जनता की मूर्खता को भी दूर कर सकता हूं।

मैं : वह कैसे?

आवाज : मेरे वैज्ञानिक जीन-चिकित्सा द्वारा किसी की भी मूर्खता को घटा सकते हैं और बढ़ा भी सकते हैं। मैंने उन्हें आदेश दे रखा है कि वे जनता की मूर्खता को बढ़ाते रहें।

मैं : वह क्यों?

आवाज : इसलिए कि मैं जनता पर शासन करना चाहता हूं।

मैं : लेकिन मूर्खों का शासक होना, क्या स्वयं मूर्ख होने का प्रमाण नहीं है?

आवाज : नहीं। शासन क्योंकि मूर्खों पर ही किया जा सकता है, इसलिए हर शासक मूर्खों का शासक होने के लिए अभिशप्त है।

मैं : दुनिया में जितने भी बड़े परिवर्तन और राज्य-क्रान्तियां हुईं, वे क्या इस 'मूर्ख' जनता ने ही नहीं कीं?

आवाज : नहीं। जनता कभी क्रान्ति नहीं करती। कुछ समझदार तथा महत्त्वाकांक्षी लोगों का एक समूह होता है, जो जनता को क्रान्ति के लिए इस्तेमाल करता है।

मैं : क्या कभी हमारे देश में भी क्रान्ति हो सकती है?

आवाज : सकती है नहीं, होगी ही। लेकिन अभी नहीं। हालांकि शताब्दी के इन अन्तिम वर्षों में दुनिया का राजनैतिक नक्शा एकदम बदल गया है लेकिन तीसरी दुनिया के कुछ देशों पर अभी भी मेरा आर्थिक-

साम्राज्य कायम है। इस साम्राज्य से जो मुनाफा मुझे मिलता है, उसका एक हिस्सा मैं अपने देश के लोगों में बाँट देता हूँ। जब तक यह हिस्सा उन्हें मिलता रहेगा, तब तक वे क्रान्ति नही कर सकते।

मैं : आपका आर्थिक साम्राज्य आखिर कब तक बना रहेगा ?

आवाज . मुझे मालूम है कि यह साम्राज्य तेजी से सिमट रहा है। और जैसे-जैसे यह सिमट रहा है, मेरे देश की खुशहाली घटती जा रही है। लेकिन इसकी परवाह मैं नही करता।

मैं : वह क्यो ?

आवाज : इसलिए कि मैंने समुद्र में और चाँद तथा मंगल ग्रह पर प्राकृतिक साधनो के अपार भण्डार खोज लिये हैं। इन साधनो से मैं न केवल अपनी खुशहाली कायम रख सकता हूँ बल्कि उसे बढ़ा भी सकता हूँ। लेकिन असल सवाल खुशहाली के घटने या बढने का नही।

मैं : तो फिर वह सवाल है क्या ?

आवाज : असन्तोष के बढ़ने का सवाल। पिछले वर्षों मे मेरे और देश के आम आदमी के बीच निरन्तर असन्तुलन बढता गया है। यह असन्तुलन असन्तोष को जन्म देता है। तमाम कोशिशों के बावजूद मेरे दुश्मनों की संख्या बढती ही जा रही है। उनकी संख्या और बढेगी तो इस देश में भी क्रान्ति होकर रहेगी।

मैं : आपके पास इतना बड़ा शासन-तन्त्र और इतनी बड़ी सेना है, इसके बावजूद क्रान्ति हो जायेगी ?

आवाज : हाँ, हो जायेगी। क्रान्ति मे शस्त्रों की नही, सिद्धान्तो की जीत होती है। मेरे खिलाफ जो सिद्धान्त खड़ा है, उसे माननेवाले बहुत खतरनाक है। वे मेरी ताकत को ही मेरे खिलाफ इस्तेमाल कर सकते हैं।

मैं : आपके खयाल में इस देश मे क्रान्ति कब तक होगी ?

आवाज : यह मुझसे क्यों पूछते हो ? क्रान्ति करनेवालों से पूछो। खुद अपने से पूछो। मैं जानता हूँ कि मेरे खिलाफ क्रान्ति की तैयारियाँ हो रही हैं और यह भी जानता हूँ कि इन तैयारियो मे तुम भी दिलचस्पी लेते रहे हो !

[कमरे मे पीली रोशनी फैल जाती है। मैं बुरी तरह घबरा जाता हूँ।]

आवाज : घबराओ मत ! बिल्कुल मत घबराओ ! मैं तुम्हे अच्छी तरह जानता हूँ। बचपन से ही तुम्हारी आकांक्षा यश और धन कमाने की रही है। एक तरफ यह लालसा है और दूसरी तरफ क्रान्तिकारी बनने की लालसा। क्रान्ति करने की नही, क्रान्तिकारी बनने की लालसा। तुम

भावुक और अति महत्त्वाकांक्षी व्यक्ति हो। मेरी व्यवस्था अधिकतर ऐसे ही चरित्रों का विकास करती है। बेफिक्र रहो, मुझे तुमसे कोई खतरा नहीं है।

[पीली रोशनी गायब हो जाती है। हल्की नीली रोशनी फिर लौट आती है।]

मैं (साहस बटोरते हुए) : तो आपको खतरा किन लोगों से है?

आवाज : खतरा लोगों से उतना नहीं, जितना विचार से है। विचार उन्हीं लोगों को पकड़ता है, जिनके पास दिमाग है। मनुष्य का दिमाग उसके पास सबसे काम की चीज है और यही सबसे खतरनाक चीज।

मैं : तो आपको असल खतरा बुद्धिजीवी लोगों से है?

आवाज : नहीं। तुम जिन लोगों को बुद्धिजीवी समझते हो, उनके पास सबसे कम बुद्धि है। बुद्धि है तो अपनी नहीं, मेरी दी हुई है। मेरे प्रचार-तन्त्र की पहुँच आधुनिक समझे जानेवाले फैशनपरस्त लोगों तक ही है। प्रचार बहुत प्रभावशाली शस्त्र है। इसके द्वारा आदमी को खुद उसके खिलाफ खड़ा किया जा सकता है! जो आदमी अपने को जितना अधिक समझदार समझता है, वह उतना ही मेरे प्रचार के प्रभाव में यानि मूर्ख है। ऐसे लोगों से मुझे कोई खतरा नहीं। खतरा है तो उन लोगों से जिनकी बुद्धि को मैं चाहकर भी खराब नहीं कर पाता।

मैं : आप लोगों की बुद्धि को खराब क्यों करते हैं?

आवाज : लोगों की बुद्धि खराब हो जायेगी तो वे निकम्मे हो जायेंगे और मेरे खिलाफ षड्यन्त्र नहीं कर पायेंगे।

मैं : आप लोगों से इतने भयभीत क्यों हैं?

आवाज : इसलिए कि उनसे मुझे खतरा है।

मैं : कैसा खतरा।

आवाज : सम्पत्ति और साम्राज्य के नष्ट हो जाने का खतरा। इतना बड़ा साम्राज्य मैंने कितनी मेहनत से खड़ा किया है! और वे कहते हैं कि यह मुझसे छीन लिया जाना चाहिए। यह कहाँ का इन्साफ है?

मैं : तो यही कहाँ का इन्साफ है कि जो मजदूर आपके कारखानों में दिन-रात काम करते हैं, उनकी रोजमर्रा की जरूरतें भी पूरी न हों?

आवाज : मजदूर? मेरे यहाँ कोई मजदूर नहीं है।

मैं : क्या कह रहे हैं आप?

आवाज : जो कह रहा हूँ, ठीक कह रहा हूँ। लोगों को शिकायत रही है कि मैं मजदूर और किसान का शोषण करता हूँ। अब मैंने इस शिकायत को पूरी तरह खत्म कर दिया है?

मैं : वह कैसे ?

आवाज : मेरा सारा काम स्वचालित मशीनों के द्वारा होता है इसलिए मुझे मजदूरों की नहीं, बहुत थोड़े-से विशेषज्ञों की आवश्यकता रह गयी है—कुछ वैज्ञानिक, कुछ तकनीशियन, कुछ कृषि-विशेषज्ञ, कुछ युद्ध-विशेषज्ञ, कुछ अंक-शास्त्री, कुछ मनोवैज्ञानिक और कुछ प्रचार-विशेषज्ञ। बस। बाकी तमाम लोग फालतू हैं।

मैं : फालतू ?

आवाज : हाँ, एकदम फालतू। इसीलिए मैं उन्हें मरवा देता हूँ।

मैं (चौंककर) : आप लोगों को मरवा देते हैं ?

आवाज : हाँ, उन लोगों को मरवा देना उन्हीं के हित मे है।

मैं : उन्हीं के हित में ?

आवाज (स्वर को लम्बा खींचकर) : हाँ ! अगर उनको मरवाया न जाये तो बेचारों को तरह-तरह की मुसीबतें झेलनी पड़ें। मैं उन्हें मुसीबत मे नहीं देख सकता, इसीलिए मरवा देता हूँ।

मैं : इस तरह लोगों को मरवा देना क्या क्रूरता नहीं है ?

आवाज : है। लेकिन क्रूरता तो आवारा कुत्तों को मरवाना भी है।

मैं : तो क्या कुत्तों में और आदमी मे कोई फर्क नहीं है ?

आवाज : कुत्ता हो या आदमी, जो भी जीव अपनी उपयोगिता खो देता है, उसे नष्ट होना ही पड़ता है। यान्त्रिकी के विकास के कारण जो लोग बेकार हो जाते हैं, वे उत्पादक नहीं रह जाते। वे दूसरों के द्वारा किये गये उत्पादन का उपभोग करते हैं और प्रगति के मार्ग में बाधक बन जाते हैं। ऐसे फालतू लोगों मे और आवारा कुत्तों में क्या फर्क है ?

मैं : यह कि वे कुत्ते नहीं, आदमी हैं।

आवाज : कुछ आदमी भी कुत्ते होते हैं।

मैं : होते नहीं, उन्हें बना दिया जाता है। अगर उन्हें उत्पादक कामों में लगाया जा सके तो वे प्रगति के मार्ग मे बाधक नहीं, साधक बन सकते हैं।

आवाज : लेकिन उन्हें कामों में तभी लगाया जा सकता है, जब मैं तकनीक को अस्वीकार करूँ या फिर माँग से अधिक उत्पादन करने का खतरा मोल लूँ। इससे मुझे क्या लाभ होगा ?

मैं : लाभ ? क्या हर काम लाभ के लिए ही है ?

आवाज : और किसलिए ?

मैं (सोचते हुए) : आप लोगों को मरवाते कैसे हैं ?

आवाज : मैं इस बात का खास खयाल रखता हूँ कि बेचारे मरनेवालों

को कष्ट न हो। इसीलिए अल्पपोषण तथा भुखमरी जैसे सहज मानवीय साधनों का उपयोग करता हूँ। कभी-कभी जरूरत होने पर सामूहिक वध भी कराना पड़ता है, जैसे कि आज तुम्हारे साथ आये बाकी लोगों का किया गया।

मैं : मेरे साथ आये लोगों का वध कर दिया गया ?

आवाज : हाँ, वे फालतू थे !

मैं : (फालतू तो मैं भी हूँ। क्या मुझे भी इसी तरह मार दिया जायेगा !)

आवाज : नहीं, तुम फालतू नहीं हो। तुम्हें इस तरह नहीं मारा जायेगा !

मैं (सोचते हुए) : आपके पास इतनी सम्पत्ति है, फिर भी आप उसे बढ़ाने के लिए ऐसे जघन्य कार्य क्यों करते हैं ?

आवाज : इसलिए कि मैं सम्पत्ति को बढ़ाऊँगा नहीं तो वह घटनी शुरू हो जायेगी। तुम क्या यह चाहते हो कि मैं भी तुम्हारे जैसा बन जाऊं ?

मैं : हर्ज तो इसमें भी कुछ नहीं लेकिन मुझे मालूम है कि मेरे चाहने से आप ऐसा करेंगे नही !

आवाज : नहीं, तुम चाहोगे तो जरूर करूँगा।

मैं : खैर, यह बताइए कि क्या कभी आपको यह सोचकर अपने ऊपर दया नहीं आती कि इतनी सम्पत्ति के होते हुए भी आप हर समय बेचैन रहते हैं ?

आवाज : यह बेचैनी जरूरी है।

मैं : क्यों ?

आवाज : इसलिए कि बेचैनी ही सम्पत्ति को बढ़ाती है। सम्पत्ति अर्जित करने के क्षेत्र में मैं अकेला नहीं हूँ। मेरे प्रतिद्वन्द्वी भी हैं। हम लोगों के बीच भयानक प्रतिस्पर्धा है। प्रतिस्पर्धा सम्पत्ति अर्जित करने के क्षेत्र में है और राजनैतिक क्षेत्र में भी ! मैं आराम की नींद सोने लगूँ तो वे मुझे लात मारकर आगे निकल जायें। यह मेरी हार होगी और हार मानना मैंने सीखा नहीं।

मैं : तो फिर क्या सीखा है ? आपका रास्ता जीत का रास्ता तो है नहीं !

आवाज : क्यों नहीं है ! आज मैं दुनिया का सबसे धनी और सबसे प्रभावशाली आदमी हूँ।

मैं : धनी आप हैं, लेकिन प्रभावशाली नहीं !

आवाज : वह क्यों ?

मैं : इसलिए कि प्रभाव अखबारों की सुर्खियों और मुसाहिबों की खुशामद में नहीं, लोगों के दिलों में होना है। जो आदमी लाखों बेगुनाह लोगों को मरवा देता हो, उसे मैं कतई प्रभावशाली नहीं मान सकता।

आवाज : तुम्हारे मानने न मानने से कोई फर्क नहीं पड़ता। तमाम लोग मानते हैं कि इस देश पर ही नहीं, दुनिया के एक बड़े हिस्से पर मेरी सत्ता कायम है।

मैं : कहाँ कायम है ? दुनिया के जिन देशों पर कभी दूसरों की सत्ता कायम थी, अब तो वे सभी एक-एक कर स्वतन्त्र हो गये हैं।

आवाज (हँसी के साथ) : स्वतन्त्र ? यह मेरे हित में है कि वे अपने को स्वतन्त्र समझते रहें। इसीलिए बहुत-से देशों को तो मैंने खुद ही स्वतन्त्र कर दिया है।

मैं : वह क्यों ?

आवाज : इसलिए कि उन्हें खुद ही स्वतन्त्र करके मैं उनसे 'अच्छे सम्बन्ध' बनाये रख सकता हूँ। आज की राजनीति में इन अच्छे सम्बन्धों का बड़ा महत्त्व है।

मैं : वह क्या ?

आवाज : जिन देशों के साथ मेरे अच्छे सम्बन्ध हैं, मैं उनको भरपूर आर्थिक सहायता देता हूँ, उनके देशों में नये-नये कारखाने लगाता हूँ, उनकी शिक्षा और संस्कृति का विकास करता हूँ और उन्हें शस्त्र तथा अपनी शान्ति-सेना देकर उनकी रक्षा भी करता हूँ।

मैं : इससे आपको क्या लाभ होता है ?

आवाज : लाभ ही लाभ ! मेरी रकम पर ब्याज बढ़ता है, कारखानों में मुनाफा मिलता है, उन देशों की संस्कृति के विस्तार के साथ-साथ मेरी जासूसी का विस्तार होता है और उनकी रक्षा के नाम पर मेरा सैनिक प्रभुत्व बढ़ता है !

मैं : इन 'अच्छे सम्बन्धों' का स्वयं उन देशों पर क्या प्रभाव पड़ता है ?

आवाज : राजनैतिक स्वतन्त्रता पाकर भी वे बेचारे आर्थिक रूप में परतन्त्र बने रहते हैं। मेरी आर्थिक सत्ता वहाँ बराबर कायम रहती है। यह सत्ता ही उन देशों की राजनीति को भी निर्देशित करती है। वे समझते हैं कि अपने बारे में वे खुद निर्णय लेते हैं। लेकिन असलियत यह है कि वे बेचारे कोई निर्णय नहीं लेते। निर्णय मैं लेता हूँ। मैं जानता हूँ कि लोगों को यह बताये बिना कि उन्हें इस्तेमाल किया जा रहा है, कैसे इस्तेमाल किया जाये !

मैं : इस तरह तो उनकी स्वतन्त्रता एकदम बेमानी है।

आवाज : स्वतन्त्रता की कीमत वही जानता है जो उसे लड़कर लेता है। उन देशों ने स्वतन्त्रता ली नहीं, उन्हें दे दी गयी है—एक खूबसूरत खिलौने की तरह। वे नहीं समझ पा रहे कि इस खिलौने का क्या करें ? मैं उनकी कमजोरी और बेवकूफी का फायदा उठाकर उनका हमदर्द बन जाता हूँ और अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की होड़ में अपने दुश्मनों के खिलाफ उन्हें औजार की तरह इस्तेमाल करता हूँ।

मैं : आप अपने दुश्मनों को लेकर इतने परेशान क्यों हैं ?

आवाज : इसलिए कि यह मेरे अस्तित्व का सवाल है। मैं उनका विरोध नहीं करूंगा तो वे मुझे खा जायेंगे। उनके विस्तार को रोकने के लिए मैं हर साल अरबों की रकम खर्च करता हूँ। मैंने उनके विरुद्ध पूरी दुनिया में, और अब तो अन्तरिक्ष में भी, इलेक्ट्रॉनिक जासूसी का जाल फैला रखा है।

मैं : इस तरह आप उनके बढ़ते हुए प्रभाव को रोक सकते हैं ?

आवाज : रोक नहीं सकता तो उनकी गति को धीमी तो कर ही सकता हूँ।

मैं : वह कैसे ?

आवाज : मेरे विरोधियों के अपने अन्तर्विरोध हैं। जहाँ-जहाँ उनकी सत्ता कायम है, वहाँ उनके विरोधी तत्त्व भी हैं। मेरे जासूसी-तन्त्र का काम है—इन तत्त्वों को बढ़ावा देना। ये तत्त्व जिस हद तक बढ़ते हैं, उसी हद तक विरोधियों का विस्तार रुकता है।

मैं : आपके विरोधी देशों में आपस में भी तो मतभेद हैं। इसका क्या कारण है ?

आवाज : उन देशों के अपने-अपने राष्ट्रीय हित और विश्व में प्रभाव बढ़ाने की आपसी होड़ है। इसी कारण उनमें टकराहट होती है। आज वे देश मुझे उतना बड़ा शत्रु नहीं समझते, जितना कि आपस में एक-दूसरे को। उनकी जो ताकत मेरे खिलाफ इस्तेमाल होती, वह अब उन्हीं के बीच एक-दूसरे के खिलाफ इस्तेमाल हो रही है। मेरा जासूसी-तन्त्र उनकी आपसी शत्रुता को और अधिक भड़काता है।

मैं : यह तन्त्र और क्या करता है ?

आवाज : दुश्मनों के खिलाफ पूरी दुनिया में प्रचार करता है। दूसरे देशों के समाचार-पत्रों, बुद्धिजीवियों, राजनैतिक नेताओं और सैनिक अधिकारियों को खरीदता है, चुनावों में घुसपैठ करता है, साम्प्रदायिक दंगे कराता है, राजनैतिक नेताओं के बारे में तरह-तरह की अफवाहें फैलाता

है, उनकी हत्याएँ कराता है, दूसरे पक्ष की सरकारों के तख्ते पलटता है और जहाँ कहीं सम्भव हो, युद्ध भड़काता है।

मैं : (आश्चर्य में) : युद्ध ?

आवाज : हाँ, युद्ध।

मैं : युद्ध-जैसे जघन्य कार्य को आप भड़काते हैं ?

आवाज : युद्ध जितना जघन्य है, मेरे लिए उतना ही जरूरी।

मैं : वह क्यों ?

आवाज : इसलिए कि युद्ध राजनैतिक क्रिया ही नहीं, राजनैतिक औजार भी है। युद्ध के द्वारा मैं लोगों की प्रतिहिंसा की शक्ति को एक विनाशक काम में झोंक देता हूँ। युद्ध नहीं होगा तो यह शक्ति मेरे विरुद्ध इस्तेमाल होगी।

मैं : लेकिन युद्ध तो पाशविक वृत्ति है। वह मनुष्य को मनुष्य नहीं रहने देता। जिन देशों में युद्ध होता है, वे हर तरह से तबाह हो जाते हैं।

आवाज : यही तो मैं चाहता हूँ।

मैं : वह क्यों ?

आवाज : वे तबाह होंगे तो मदद के लिए मेरे पास आयेंगे। तब मैं उन पर अपना राजनैतिक प्रभाव जमाने के साथ-साथ उन्हें अपनी सेना, शस्त्र और दूसरी युद्ध-सामग्री बेचकर मुनाफ़ा भी कमा सकूँगा।

मैं : युद्ध—और मुनाफ़े के लिए ?

आवाज : हाँ, सभी कुछ मुनाफ़े के लिए। जो लोग कहते हैं कि वे कोई काम बिना मुनाफ़े के करते हैं, वे धोखा देते हैं; और धोखा देकर कोई बड़ा मुनाफ़ा कमाना चाहते हैं।

मैं : युद्ध से आपको क्या-क्या फ़ायदे हुए हैं ?

आवाज : सबसे पहले तो उसने दुनिया की तेजी से बढ़ती हुई आबादी को रोका है। इसके अलावा युद्ध ने मेरे देश के शिक्षित तथा सम्मानित वर्ग को ऊँचे पद, मेरी तकनीक को विकास का अवसर और मेरे अर्थतन्त्र को विस्तार दिया है ! युद्ध न होते तो शान्ति यह सब दे सकती थी ?

मैं : शान्ति तो केवल शान्ति दे सकती है।

आवाज : लेकिन वह शान्ति मनुष्य के हित में नहीं होगी।

मैं (आश्चर्य के साथ) : क्यों ?

आवाज : इसलिए कि शान्ति निष्क्रियता को जन्म देती है। उससे प्रतिस्पर्धा की भावना अवरुद्ध होती है और विकास रुकता है।

मैं : विकास तो उन्हीं देशों का रुका है, जिन्होंने युद्ध की विभीषिका को झेला है।

आवाज : लेकिन मेरे देश ने तो युद्धों के कारण ही तरक्की की है ।

मैं : तरक्की लेकिन किस कीमत पर ?

आवाज : कीमत चुकाये बिना तो कुछ भी हासिल नहीं होता ।

मैं : लेकिन इस मामले में तो कीमत किसी ने चुकायी और हासिल किसी और को हुआ ।

आवाज : युद्ध में यही होता है । इसीलिए मैं अपने देश को युद्ध की छाया से बचाता रहा हूँ और दूसरे देशों को युद्ध में फँसाकर फायदा उठाता रहा हूँ ।

मैं : लेकिन दूसरे देशों में युद्ध भड़काकर हम खुद भी तो उनमें उलझते रहे हैं । जहाँ-जहाँ हमने खुद युद्ध में हिस्सा लिया, उसका हमारे देश पर क्या असर पड़ा ? लाखों जवान दूसरों की भूमि को बचाने के लिए काम आ गये और हमारे अर्थ-तन्त्र की कमर टूट गयी । लोगों पर बेतहाशा टैक्स बढ़ गये । हमारे सिक्के का बराबर अवमूल्यन होता गया । वेतन बढ़ने के बावजूद गरीबी बढ़ती रही । हमारा देश सम्पूर्ण विध्वंस के कगार पर आ खड़ा हुआ । यही कारण है कि इन युद्धों के विरुद्ध आज पूरे देश में प्रदर्शन और आन्दोलन हो रहे हैं । लोग माँग कर रहे हैं कि हमें अन्तर्राष्ट्रीय तथा अन्तर्नक्षत्रीय समस्याओं की बजाय राष्ट्रीय समस्याओं पर ध्यान देना चाहिए ।

आवाज : माँग करनेवाले यह समझने की कोशिश क्यों नहीं करते कि युद्धों में हिस्सा लेकर हमने उन लोगों का ही हित किया है ।

मैं : उनका हित ? वह कैसे ?

आवाज : दुश्मन के विस्तार को रोककर ।

मैं : लेकिन उसका विस्तार रुका कहाँ ? उसके विस्तार को रोकने के लिए हमने जहाँ-जहाँ भी युद्धों में हिस्सा लिया, अन्त में जीत दुश्मन की ही हुई । और अब तो हमारे लोग माँग कर रहे हैं कि युद्ध बन्द होने ही चाहिए, बेशक उन देशों में दुश्मन का प्रभाव बढ़ जाये ।

आवाज : दुश्मन इसी तरह आगे बढ़ता रहा तो जल्दी ही हमारे देश को भी अपनी लपेट में ले लेगा !

मैं : इसकी चिन्ता लोगों को नहीं है । उन्होंने कहना शुरू कर दिया है कि जैसा जीवन वे जी रहे हैं, उससे तो दुश्मन के विचार का आना ही अच्छा ।

आवाज : लोग मूर्ख हैं और मूर्खों की बात पर ध्यान देना भी मूर्खता है ।

मैं : आप युद्ध न भड़कायें तो उससे आपका क्या नुकसान है ?

आवाज़ : युद्ध नहीं हों तो शस्त्रों और युद्ध-सामग्री का उत्पादन करने वाले मेरे कारखानों का क्या होगा ?

मैं : आप उन कारखानों को बन्द क्यों नहीं कर देते ?

आवाज़ (ठहाका लगाकर) : उधर तो दुश्मन निरन्तर अपनी युद्ध-शक्ति बढ़ा रहे हैं, इधर मैं अपने कारखाने भी बन्द कर दूँ !

मैं : कारखाने बन्द नहीं कर सकते तो कम-से-कम युद्ध भड़कायें तो नहीं।

आवाज़ : नहीं, यह भी नहीं हो सकता। कहीं-न-कहीं युद्ध कराते रहना मेरे लिए ज़रूरी है—एकदम ज़रूरी।

मैं · वह क्यों ?

आवाज़ · मेरे पास एक ऐसी विशाल सेना है, जो शराब और औरत के नशे में पिछले अनेक वर्षों में कहीं-न-कहीं युद्ध लड़ती रही है। कहीं भी युद्ध नहीं होगा तो यह बिगड़ी हुई सेना मुझे चैन से नहीं रहने देगी।

मैं · आप उस सेना को बरखास्त क्यों नहीं कर देते ?

आवाज़ : मैं उसे बरखास्त कर दूँगा तो वह मुझे बरखास्त कर देगी। वह मेरे खिलाफ़ युद्ध छेड़ देगी।

मैं · इन युद्धों के पीछे मनुष्य की कौन-सी प्रवृत्ति काम करती है ?

आवाज़ अहं। अहं व्यक्ति का होता है और राष्ट्र का भी। हमारे देश के लोग अपने को दुनिया के बाकी सभी लोगों से बेहतर यानि नम्बर एक नागरिक मानते हैं। वे किसी भी कीमत पर नम्बर दो बनने को तैयार नहीं। मैंने उनके मन में आतंक बैठा दिया है कि दुश्मन का विस्तार होगा तो वे नम्बर दो बन जायेंगे। इसीलिए वे चाहते-न-चाहते युद्धों में मेरा साथ देते रहे हैं।

मैं : आखिर इन युद्धों के द्वारा आप क्या पाना चाहते हैं ?

आवाज़ एक ज़माना था कि भूमि और धन-सम्पत्ति —यहाँ तक कि कभी-कभी तो औरत के लिए भी युद्ध होते थे। लेकिन अब इन तुच्छ चीज़ों के लिए कोई युद्ध नहीं करता। अब तो जहाँ भी युद्ध होते हैं, शक्ति प्राप्त करने और अपने प्रभाव को मनवाने के लिए ही होते हैं।

मैं : दो महायुद्धों ने दुनिया को बहुत नुकसान पहुँचाया है। उनके बाद क्या तीसरा महायुद्ध भी होगा ?

आवाज़ मैंने और मेरे विरोधियों ने भी तीसरे महायुद्ध की सम
तैयारियाँ पूरी कर ली हैं। अणु-बम और ऐसे 'स्पेस-बम' बना लि
जिन्हें अन्तरिक्ष से दागकर पूरे भूमण्डल को नष्ट किया जा
समुद्र में आरम्भ होनेवाले युद्ध की तकनीक का विकास भी

है। इस युद्ध के शस्त्र हैं—भयानक तूफान, अत्यधिक वर्षा, वर्षा को बिल्कुल समाप्त करके मैदानों को रेगिस्तान बना देना, हवाओं का रुख मोड़ देना या शत्रु के पूरे-के-पूरे क्षेत्र को ऑक्सीजन-विहीन बना देना। इसके अलावा जैविक-युद्ध अथवा कीटाणु-युद्ध की खोज भी कर ली गयी है। इसके द्वारा शत्रु-पक्ष में भयानक महामारी फैलाकर उसे तबाह किया जा सकता है!

मैं : इन तमाम विनाशक आयुधों को नष्ट कर दिया जाये तो भावी युद्ध की आशंका समाप्त नहीं हो जायेगी?

आवाज : नहीं। आयुधों को तो नष्ट किया जा सकता है लेकिन उन्हें दोबारा बना लेने की मनुष्य की क्षमता को कैसे नष्ट किया जायेगा?

मैं : अगर तीसरा युद्ध हुआ तो उसका नतीजा क्या होगा?

आवाज : नतीजा उससे कहीं भयानक होगा, जो कि हम आज सोच सकते हैं। वह युद्ध इस सभ्यता का अन्तिम युद्ध होगा।

मैं : क्या किसी तरह युद्ध की सम्भावनाओं को समाप्त नहीं किया जा सकता?

आवाज : नहीं। दुनिया के भले आदमी और शान्ति-रक्षक हमेशा से युद्धों को समाप्त करने की कोशिश करते रहे हैं और साथ ही कहीं-न-कहीं युद्ध होते रहे हैं। युद्ध को रोका नहीं जा सकता, क्योंकि वह हमारे मनुष्य होने की शर्त है।

मैं : अगला युद्ध क्या आपके और आपके दुश्मन देशों के बीच होगा?

आवाज : हो भी सकता है। लेकिन मेरी कोशिश रहेगी कि वह युद्ध दुश्मन देशों में आपस में हो।

मैं : समाचारपत्रों में और टेलिस्क्रीन पर अक्सर शोर सुनायी देता है कि हम भी अपने देश में वही व्यवस्था ला रहे हैं, जो कि दुश्मन देशों में है। इस शोर के पीछे क्या रहस्य है?

आवाज (हँसी के साथ) : यह सब तो मेरे प्रचार-तन्त्र का चमत्कार है। इसके पीछे 'जहर-से-जहर को मारने' का सिद्धान्त है। मुझे मालूम है कि मेरे देश में भी काफी लोग उस व्यवस्था के समर्थक हो गये हैं। ऐसे लोगों का विरोध करना, उनकी ताकत को बढ़ाना होगा। इसलिए मैं उनका विरोध नहीं करता बल्कि खुद उनका हिमायती बन जाता हूँ और लोगों को जो कुछ देना चाहता हूँ, यह कहकर देता हूँ कि यही वह व्यवस्था है!

मैं : इस तरह भ्रम फैलाकर आप अपनी व्यवस्था को कब तक कायम रख सकते हैं?

आवाज : मेरी व्यवस्था एक ढहती हुई व्यवस्था है। मुझे मालूम है

कि इस शताब्दी के साथ-साथ मेरी सत्ता को समाप्त हो जाना है। लेकिन उसमे मैं भयभीत नही हूँ।

मैं : वह क्यो ?

आवाज : इसलिए कि मैंने अपार धन खर्च करके मंगल ग्रह पर जीवन की स्थितियाँ उत्पन्न कर ली हैं। वहाँ ऐसी जलवायु नहीं थी, जिसमे कि मनुष्य जी सके। इसलिए मैंने बड़ी-बड़ी प्रयोगशालाएँ स्थापित करके कृत्रिम जलवायु उत्पन्न की। अब मनुष्य वहाँ उतनी ही आसानी से जी सकता है, जितनी आसानी से पृथ्वी पर। यह इस शताब्दी का एक बड़ा चमत्कार है।

मैं : आपकी सत्ता को समाप्त हो जाना है तो यह चमत्कार आपके किस काम आयेगा ?

आवाज : मेरी सत्ता के समाप्त होने पर यह चमत्कार ही काम आयेगा। जैसे युद्ध राजनीति का औजार है, वैसे ही अन्तरिक्ष भी। क्रान्ति होने से ठीक पहले मैं अपने तमाम महत्त्वपूर्ण विशेषज्ञो, सूक्ष्म वैज्ञानिक उपकरणो तथा अन्तरिक्ष आयुधो को लेकर मगल पर जा बसूँगा। वहाँ मैंने पहले ही एक खूबसूरत शहर बना लिया है।

मैं : शहर ?

आवाज : हाँ, अपने समय का सबसे अद्भुत शहर। यह शहर मनुष्य के सपनो का शहर है। वहाँ आप जो कुछ चाहेंगे, वही मिलेगा। इस दुनिया से ऊबे हुए लाखो यात्री हर साल मगल-यात्रा पर जाते हैं और इसी जीवन मे स्वर्ग का आनन्द पाते हैं।

मैं : उस शहर मे आमोद-प्रमोद के साधनो के अलावा और कुछ नहीं ?

आवाज · क्यो नही ! मंगल पर गुरुत्वाकर्षण का दबाव पृथ्वी से कम है। इसलिए मैंने वहाँ दिल के मरीजो के लिए एक सेनिटोरियम बनवा दिया है ! कुल मिलाकर मगल-यात्रा एक बहुत बड़ा उद्योग बन गया है।

मैं . उद्योग ?

आवाज . हाँ, उद्योग। मेरी बड़ी-बड़ी कारपोरेशनें इस उद्योग को चला रही हैं। इससे मुझे हर साल बहुत मोटा मुनाफा मिलता है।

मैं · फिर मुनाफा ! क्या आप मुनाफे के बिना कोई भी काम नहीं करते ?

आवाज : कतई नही। मुनाफे की एक और बडी सम्भावना मंगल ग्रह मे है।

मैं : वह क्या ?

आवाज : मगल के गर्भ मे मूल्यवान खनिज पदार्थों का अपार भण्डार है। मेरे वैज्ञानिक बराबर इस बारे में खोज कर रहे हैं ! /

मैं : इन खोजों का क्या लाभ होगा ?

आवाज : पृथ्वी पर मेरी सत्ता समाप्त हो जाने पर मैं मंगल में पहुँचूंगा तो वहाँ तुरन्त अपार सम्पत्ति का स्वामी बन जाऊँगा। मैं वहाँ भी अपनी सत्ता स्थापित कर लूंगा और अन्तरिक्ष जासूसी तथा अन्तरिक्ष आयुधों के बल पर वहाँ बैठे ही इस दुनिया पर अपना प्रभाव जमाये रहूँगा।

मैं : वहाँ पहुँचकर आप अपने विरोधियों के प्रभाव से बच जायेंगे ?

आवाज : नहीं। मंगल पर भी मुझे उनका सामना करना पड़ेगा। यदि वहाँ भी विषम परिस्थितियाँ उत्पन्न हो गयीं तो मैं किसी तीसरे ग्रह पर चला जाऊँगा।

मैं : जब आप जानते हैं कि आप अपने विरोधियों से जीत नहीं सकते तो भी उनके साथ क्यों जूझ रहे हैं ?

आवाज : तुम अच्छी तरह जानते हो कि एक दिन तुम्हें मरना ही है तो भी तुम आत्महत्या क्यों नहीं कर लेते ?

मैं : कर सकता तो जरूर कर लेता। लेकिन चाहकर भी कर नहीं पाता।

आवाज : यह न कर पाना ही मृत्यु का विरोध है। इसी तरह मैं अन्त तक उनका विरोध करूंगा।

मैं : जिस विरोध की असफलता निश्चित हो, वह विरोध क्या मायने रखता है ?

आवाज : तुम मूर्ख हो इसीलिए ऐसा सोचते हो ! वैसे यह अच्छा है कि तुम मूर्ख हो। मुझे समझदार लोगों की नहीं, मूर्ख लेकिन चालाक लोगों की जरूरत है। उनकी मूर्खता और चालाकी मेरे काम की चीज है।

मैं : वह कैसे ?

आवाज : मूर्ख आदमी की चालाकी को मैं खरीद सकता हूँ। चालाकी समझदार आदमी के पास हो तो उसे खरीदा नहीं जा सकता। समझदार आदमी के साथ एक दिक्कत यह भी है कि वह ईमानदार नहीं होता। वह अपनी समझ से जानता है कि जैसे माहौल में वह जी रहा है, उसमें ईमानदारी चलेगी नहीं। मूर्ख ही ईमानदार बने रहने की कोशिश करता है। और उसकी यह ईमानदारी भी मेरे काम की चीज है। तुम मूर्ख हो, चालाक हो और ईमानदार भी। इसीलिए तुम मेरे काम के आदमी हो।

मैं : चलिए, आपकी नजर में कुछ तो हूँ।

आवाज : कुछ नहीं, बहुत कुछ। आज मेरे लिए कोई भी आदमी इतना महत्त्वपूर्ण नहीं, जितने कि तुम। मैंने तुम्हें जिस काम के लिए चुना है, उससे तुम्हारा नाम…

[वाक्य बीच में ही लटकता रह जाता है। उधर से आवाज आनी बन्द हो जाती है। लाल बत्ती बार-बार जलती-बुझती है। यन्त्रों में उसी तरह सनसनाहट होती रहती है।]

मैं : (यह क्या हुआ ? आवाज बन्द क्यों हो गयी ? क्या किसी यन्त्र में खराबी है ? या वह मुझसे नाराज हो गया ? जरूर नाराज हो गया है। मुझसे ऐसी क्या गलती हो गयी ? लेकिन क्या जरूरी है कि गलती हुई ही हो। पहले ही मैंने ऐसी कौन-सी गलती की थी, जिसके लिए पकड़कर यहाँ लाया गया ! मैं हमेशा बेवकूफ ही रहूँगा। शुरू में तो दहशत के मारे आवाज नहीं निकल रही थी। फिर बोलना शुरू किया तो पट-पट बोलता गया। पता नहीं, उसे कौन-सी बात चुभ गयी। चुभ गयी तो चुभ जाने दो। मैं क्या कर सकता हूँ ? उसने ही तो कहा था, 'जो बात मन में उठे, वही पूछो।' अब पूछ लो तो हजरत खफा हो गये।)

[तमाम यन्त्रों में उसी तरह सनसनाहट दौड़ रही है। अब सनसनाहट पहले से कहीं अधिक भयावह लगने लगी है।]

मैं : (यह सनसनाहट बन्द क्यों नहीं हो जाती ! जब आवाज ही बन्द हो गयी तो फिर इसका क्या मतलब है ! क्या यहाँ कोई ऐसा स्विच है, जिससे सनसनाहट को बन्द किया जा सके ?)

[मैं उठकर देखता हूँ लेकिन उन पेचीदा मशीनों का कुछ भी सिर-पैर समझ में नहीं आता। सनसनाहट उसी तरह दौड़ रही है। लाल बत्ती उसी तरह जल-बुझ रही है।]

मैं : (यह बत्ती इस तरह भक-भक क्यों कर रही है ? क्या कोई खतरा है ? हो सकता है, मशीन मुझ जैसे कुछ और लोगों को पकड़ लायी हो और 'वह' उनकी खबर लेने या फिर उन्हें मरवाने गया हो ! कैसा अजीब आदमी है ! लोगों को मरवाने के बारे में कैसे ठण्डेपन से बातें करता है ! वह हर बात ऐसे ही ठण्डेपन से करता है।)

[अचानक लाल बत्ती बन्द हो जाती है। कमरे में ठण्डी नीली रोशनी फैल जाती है। और तभी वह ठहरी हुई भारी आवाज फिर सुनायी देती है।]

आवाज : मुझे अभी मेरे जासूसी सदर मुकाम से एक खतरनाक रिपोर्ट मिली है।

मैं : वह क्या ?

आवाज : कुछ लोगों ने उन्मुक्तता-दिवस का नाजायज फायदा विद्रोह कर दिया है।

मैं : विद्रोह ?

आवाज : हां, विद्रोह। मुझे फौरन उसका इन्तजाम करना है। तुम इन्तजार करो। कुछ देर बाद तुमसे फिर बातें होंगी !

[नीली रोशनी गायब हो जाती है और पूरे कमरे में गहरी लाल रोशनी फैल जाती है। मेज पर लगे यन्त्रों में होनेवाली सनसनाहट बन्द हो जाती है।]

डूबता सूरज

आवाज मन्द होते ही मैं एक बार फिर अपनी दुनिया मे लौटा। यह सोचकर मुझे नये सिरे से दहशत महसूस हुई कि मैं किस दुष्चक्र में फँस गया हूँ! मैं अपने और अपने लोगों के बारे मे कुछ सोचना चाहता था। लेकिन 'वह' फिर दिमाग पर सवार हो गया। वह लाखों लोगो को बेरहमी से मरवा देता है। मरवाकर अफसोस भी कतई नही करता। ऐसे आदमी का कोई भरोसा नही। हो सकता है—यह मुझे भी मरवा देना चाहता हो। उसने कहा था—मैं जिन लोगो को मरवाता हूँ, उन्हें मरवा देना उन्ही के फायदे में है। फिर उसने कहा था—तुम्हें एक बड़ा फायदा पहुँचाने के लिए यहाँ बुलाया गया है। कहीं यह वैसा ही फायदा तो नही? लेकिन नहीं, मरवाना होता तो उसे यह नाटक करने की क्या जरूरत थी? लगता है—काम कुछ और ही है। और जो भी है, वह महत्त्वपूर्ण काम है। बहुत ही महत्त्वपूर्ण, जैसाकि यह कहता है।

वह तो न जाने क्या-क्या कहता है। उसकी बातों पर जायें तो आदमी का दिमाग खराब हो जाये। उसकी बातें औरो का दिमाग खराब करती हैं, लेकिन खुद उसका दिमाग—वह एकदम दुरुस्त है। उसके पास हर सवाल के नपे-तुले जवाब हैं। सही हो या गलत, लेकिन जवाब हैं!

वह जो कुछ करता है, अच्छी तरह जानता है कि क्या कर रहा है। किसी के ऊपर जुल्म करता है तो साफ कहता है कि वह जुल्म कर रहा है। यह दीगर बात है कि साथ ही यह भी कह दे कि जुल्म करना उन्ही लोगों के हित मे है!

वह पहले लोगो को कमजोर बनाता है और फिर शिकायत करता है कि वे कमजोर क्यों हैं! हैं तो उन पर जुल्म होगा ही!

उसकी सारी व्यवस्था ही जुल्म की व्यवस्था है। उसने पूरी दुनिया मे षड्यन्त्र का भयानक जाल फैला रखा है। वह कही दिखायी नही देता,

लेकिन जाल के तमाम सूत्र उसके हाथ में हैं।

वह सब कुछ जानता है। यह भी जानता है कि मैं उसके खिलाफ होनेवाली गतिविधियों में दिलचस्पी लेता रहा हूं। जानता है, फिर भी मेरे ऊपर भरोसा करता है।

वह मुझे जानता है तो उन लोगों को भी जरूर जानता होगा जो सचमुच उसकी सत्ता को समाप्त कर देने की तैयारी कर रहे हैं! सब कुछ जानता है तो भी उसने उन लोगों को क्यों छोड़ रखा है? उन्हें भी क्यों नहीं पकड़वा लेता? पकड़वाना तो जरूर चाहता होगा, लेकिन वे इसकी इलेक्ट्रॉनिक जासूसी के तमाम हथकण्डों को जानते हैं और उनसे बचने के तरीके भी उनके पास हैं। उनका जाल भी पूरी दुनिया में फैला है...

अचानक मेज पर लगे यन्त्रों में सनसनाहट होने लगी और तभी वह रहस्यमय भारी आवाज फिर सुनायी दी, "मुझे थोड़ा वक्त लग गया। तुम्हें परेशानी तो नहीं हुई?"

"नहीं, कोई खास नहीं।"

"अच्छा, अब तुम पर इतना भरोसा किया जा सकता है कि आमने-सामने बात की जा सकें! ठहरो, मैं अभी तुम्हें अपने पास बुलाने का इन्तजाम करता हूँ!"

अचानक खट-खट की आवाज सुनायी दी। एक रोबो अपनी मशीनी चाल से चला आ रहा था। उसने आते ही मेरा हाथ थाम लिया और जिधर से आया था, मुझे उधर ही ले चला। हम मुश्किल से बीस कदम चलें होंगे कि सामने की दीवार में एक दरवाजा खुल गया।

रोबो ने मेरा हाथ छोड़ दिया।

मैं सहमे कदमों से अन्दर दाखिल हुआ। कमरा बहुत छोटा है और उसमें किसी भी तरह का सामान नहीं है। सिर्फ एक दीवार पर टेलिस्क्रीन लगा है।

खाली कमरे ने मेरे भीतर और खालीपन भर दिया।

मैं कमरे के बारे में सोच ही रहा था कि धीरे-से दरवाजा बन्द हुआ और कमरा घरघराकर ऊपर उठने लगा। काफी देर घरघराहट चलती रही। कमरा ऊपर उठता गया। जैसे-जैसे कमरा ऊपर उठ रहा था, मुझे लग रहा था—मैं मौत के नजदीक पहुँच रहा हूँ। आखिर वह झटका खाकर रुका तो मैं दो-सौवीं मंजिल पर था।

दरवाजा फिर खुला। मैं बाहर गैलरी में आया तो फिर वही आवाज सुनायी दी, "दायीं तरफ चलो!"

इतनी बड़ी बिल्डिंग और कोरा सन्नाटा ! मैं लड़खड़ाते कदमों से आगे बढ़ा।

थोड़ी देर बाद आवाज फिर सुनायी दी, "रुक जाओ !"

मैं जिस कमरे के सामने खड़ा था, उसका दरवाजा खुला और साथ ही हुक्म सुनायी दिया, "अन्दर आओ !"

कमरा बहुत बड़ा और बहुत शानदार है। अजीबो-गरीब किस्म का फर्नीचर और वैसे ही परदे। दीवारों पर दुनिया के प्रसिद्ध चित्रकारों की पेंटिंग लगी हैं। एक पेंटिंग उस सफेद दाढ़ीवाले चित्रकार की भी है।

खिड़की का एक पर्दा कुछ हटा हुआ है। उसमें से शहर का काफी बड़ा हिस्सा दिखायी दे रहा है। बौना शहर खिलौनों की दुकान की तरह फैला है। मैं खिड़की के पास सरक आया और गुलिवर की तरह अपने लिलिपुट को देखने लगा।

तभी आवाज एक बार फिर गूंज उठी, "अरे ! तुम कहां रह गये ? अन्दर आओ न !"

मैंने मुड़कर देखा—कमरे में भीतर की तरफ एक दरवाजा और खुला है। शायद वह पहले से ही खुला था लेकिन यहां आकर मैं ऐसा आतंकित हुआ कि देख ही नहीं सका। इस दरवाजे के भीतर 'वह' है। घबराहट के मारे मेरे पैर जाम हो गये।

"आओ !"

आवाज लोहे की गर्म सलाख की तरह मेरे भीतर उतरती चली गयी।

अन्दर का कमरा और भी बड़ा है। उसकी तमाम दीवारें और छत काली हैं। सामने की दीवार में दो गोल सूराख हैं। सूराखों में से खून जैसी लाल रोशनी झर रही है। अचानक वे दो आंखें मेरे सामने आकर ठहर गयीं। ये आंखें किसकी हैं ? ये मुझे क्यों घूरती रहती हैं ?

कमरे में तरह-तरह की मशीनें लगी हैं। मैं तय नहीं कर सका कि उन मशीनों में से 'वह' कौन-सी है। भयमारा खड़ा था कि कमरे के बीचोबीच रखी एक मशीन हँसी, "आखिर तुम आ ही गये !"

उसकी हँसी मुझे एकदम जहरीली लगी। अगर वह नाराज होता या डाँटता तो मैं उसे बरदाश्त कर लेता। लेकिन यह हँसी—इसका मैं क्या करूं ?

"बैठो !" उसने एक मशीनी कुर्सी की तरफ इशारा किया।

मैं मौत के जबड़े में आगे सरका और कुर्सी पर बैठ गया। अब मैंने उसे गौर से देखा। वह मझोले कद और चौड़ी काठीवाला आदमी है। चेहरे पर झुर्रियों का जाल है। खोपड़ी के बीचोबीच चौड़ी सड़क बनी

कनपटियों के पास धुनी हुई रुई जैसे थोड़े-से बाल हैं। कनपटियों के ही नहीं, भवों के बाल भी सफेद हैं। भवों के नीचे बड़ी-बड़ी तेज आँखें। आंखों में गहरा विश्वास और कांच-जैसी चमक। मेरी तरफ नजर उठाकर उसने कहा, "अरे, तुम्हें क्या हुआ ? तुम्हारे तो हाथ कांप रहे हैं !"

मेरा खून सफेद पड़ने लगा।

उसने फिर पूछा, "तुम घबरा क्यों रहे हो ?"

मैं कोई उत्तर नहीं दे सका।

अजीब तमाशा है। यह अपनी 'इलेक्ट्रानिक' जासूसी के द्वारा सब कुछ जान लेता है—सब कुछ ! इससे कुछ भी छुपाया नहीं जा सकता।

"छुपाने की जरूरत भी नहीं है। जो बात तुम्हारे मन में उठे, उसे बेझिझक कहो। कोई तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकता। यहाँ तुम पूरी तरह सुरक्षित हो।"

सुरक्षित ? नहीं, मैं सुरक्षित नहीं हूं। यह मुझे धोखा दे रहा है !

"धोखा मैं किसी को नहीं देता। जो कुछ कहना होता है, साफ कहता हूँ।"

"तो क्या मैं सचमुच सुरक्षित हूँ ?"

"एकदम सुरक्षित।"

मैं भी सारी उम्र बेवकूफ ही रहा। यहाँ आते समय लग रहा था कि जाते ही मुझे मार डाला जायेगा ! लेकिन ऐसा तो कुछ भी नहीं हुआ !

वह फिर बोल उठा, "यह बताओ कि पत्नी को अपने मित्र के साथ कर तुम्हें कैसा लगा ?"

मेरे सोच का स्वाद बिगड़ने लगा। बोला, "आप जानते तो हैं, फिर मुझसे क्यों पूछते हैं ?"

"मैं जानना चाहता हूँ कि तुम्हारे मन में अभी भी उसका मोह बचा है या नहीं ?"

"नहीं, अब मेरे मन में उसका कोई मोह नहीं।"

"और प्रेमिका का मोह ?"

"वह भी मोह को अपने साथ ले गयी।"

"बच्चे के बारे में तो तुम जरूर सोचते होगे ?"

"आप मेरी दुखती रगों को क्यों छेड़ रहे हैं ?"

"बच्चा तुम्हारी दुखती रग है ?"

"हाँ, है। उसे मारकर खाने के बाद मैं आत्महत्या करना चाहता था। लेकिन कर नहीं सका।"

"यह अच्छा है कि तुम आत्महत्या करना चाहते थे।"

"अच्छा है ?"

"हाँ, आत्महत्या करने का इरादा बहुत अच्छा है। यह इरादा वही आदमी कर सकता है, जो संसार से विरक्त हो जाता है। और विरक्ति बहुत काम की चीज़ है।"

"हो सकती है लेकिन मैं तो इसे कायरता ही कहूँगा।"

"अपना दिल छोटा मत करो। तुम बहुत भाग्यशाली आदमी हो, शायद इसीलिए मैंने तुम्हें अपने काम के लिए चुना है।"

"लेकिन वह काम है क्या ?"

"अभी तुम्हें सब कुछ पता चल जायेगा और पता चलते ही तुम दुनिया के सबसे बड़े आदमी बन जाओगे।"

"बड़ा आदमी और मैं ?"

"हाँ, तुम।"

"लेकिन मैं तो यहाँ मौत से मिलने के लिए आया था!"

"मौत से तो एक दिन सभी को मिलना है। लेकिन जहाँ तक तुम्हारा ताल्लुक है, अभी नहीं। अभी तो मेरी बारी है।"

"आपकी ?"

"हाँ, मेरी।" उसने मुस्कराकर कहा, "मैंने उन्मुक्तता-दिवस मनाने का जो कारण तुम्हें बताया था, वह वास्तविक कारण नहीं था। वास्तविक कारण यह है कि आज मैं इस बूढ़े शरीर के बन्धन से मुक्त होना चाहता हूँ। और इसी महत्त्वपूर्ण काम में तुम्हारी मदद चाहता हूँ।"

"मेरी मदद ?"

"हाँ, तुम्हारी मदद।"

"मैं आपके लिए क्या कर सकता हूँ ?"

"सब कुछ। तुम सब कुछ कर सकते हो। मैंने तुम्हें अपने बारे में जो कुछ बताया, वह बिना वजह नहीं था। उसे जाने बिना तुम मेरे काम के महत्त्व और तरीके को नहीं समझ सकते थे। अब तुम समझ गये हो, इसलिए मेरी मदद कर सकते हो।"

"अभी भी मैं क्या मदद कर सकता हूँ ?"

"मैं कहता हूँ—कर सकते हो!" उसने ज़ोर देकर कहा। फिर धीरे स्वर में बोला, "मैं इस दुनिया को तथा इससे आगे की दुनियाओं को एक बिल्कुल नया रूप देना चाहता हूँ। इस महान काम को पूरा करने के लिए मैं तुम्हारे साथ एक सौदा करना चाहता हूँ।"

"सौदा ?"

"हाँ, सौदा। तुम जानते हो कि मेरे पास हज़ारों कारखाने, बड़ा

और वहुदेशीय कार्पोरेशन हैं। एक चौथाई दुनिया में मेरा साम्राज्य फैला है और मैं संसार का सबसे प्रभावशाली व्यक्ति माना जाता हूँ। इस सारे प्रभाव और अपनी खरबों की सम्पत्ति में मैं तुम्हें वरावर का हिस्सेदार वनाना चाहता हूँ।"

मैं चौंका, "यह कैसे हो सकता है ? मैं तो एक गरीव आदमी हूँ।"

"नहीं, तुम गरीव नहीं हो। तुम्हारे पास वह सम्पत्ति है कि तुम सम्मानपूर्वक हिस्सेदार वन सकते हो।"

"वह कैसे ?"

"तुम देख रहे हो कि मैं एक वूढ़ा आदमी हूँ। मेरा शरीर थक चुका है। इस शरीर से मैं अपने लक्ष्य को पूरा नहीं कर सकता। तुम जवान हो, स्वस्थ हो, सुन्दर हो और हर तरह से मेरी पसन्द के आदमी हो। मैं और तुम मिलकर उस महान लक्ष्य को पूरा कर सकते हैं और एक लम्वे अरसे तक इस दुनिया पर और दूसरी दुनियाओं पर शासन कर सकते हैं।"

"यह कैसे हो सकता है ?"

"हम दोनों के साझीदार वनने से। एक-दूसरे की सम्पत्तियों में आधा-आधा हिस्सा कर लेने से।"

"क्या मतलव ?"

"मतलव यह कि मेरे वैज्ञानिकों ने जो सबसे वड़ा आविष्कार किया है, वह है—मृत्यु पर विजय। इस आविष्कार के अनुसार किसी व्यक्ति को इंजेक्शन लगाकर उसकी सम्पूर्ण चेतना को 'फ्रिज' में खींच लिया जाता है और फिर उस इंजेक्शन को किसी स्वस्थ-युवा शरीर को लगा दिया जाता है। पहले व्यक्ति की चेतना और दूसरे का शरीर मिलकर एक नया व्यक्ति वन जाता है। इस तरह व्यक्ति की चेतना को एक-दो शताब्दी तक ही नहीं, लाखों वरसों तक जीवित रखा जा सकता है।"

मेरा पूरा शरीर पसीने-पसीने हो गया।

उसने हिम्मत वँधाते हुए कहा, "घवराओ मत ! विल्कुल मत घवराओ !"

मैं और ज्यादा घवरा गया।

"मैं कहता हूँ—तुम्हें विल्कुल भी घवराने की जरूरत नहीं है। तुम्हारी मरजी के खिलाफ मैं कुछ नहीं करूँगा। तुम जो चाहोगे, वही होगा।"

"नहीं, वह कतई नहीं होगा। मैंने आज तक जो कुछ भी चाहा, वही नहीं हुआ।"

"लेकिन आज होगा !"

"क्या होगा ? आप साफ-साफ वतायें—मुझसे चाहते क्या हैं ?"

"मैं चाहता हूँ कि इंजेक्शन लगाकर मेरी चेतना खींच ली जाये और वह इंजेक्शन तुम्हारे शरीर में लगा दिया जाये। इस तरह हम दोनों के मिलने से जो नया व्यक्ति बनेगा, उसके रूप में हम उस महान लक्ष्य को प्राप्त कर सकेंगे।"

अरे! यह तो सचमुच मेरी जान लेना चाहता है। शरीर बच भी गया तो उससे क्या होगा! यह शरीर तो 'मैं' नहीं हूँ। 'मैं' तो वह है, जो कहता है कि यह शरीर मेरा है। वह 'मैं' नहीं रहेगा तो यह शरीर क्या मायने रखता है?

"मायने तो शरीर ही रखता है।" उसकी आवाज सुनायी दी, "मनुष्य के पास सबसे मूल्यवान सम्पत्ति उसका शरीर ही है। चेतना भी शारीरिक अवयवों और उनके संवेगों का सूक्ष्म रूप ही है। तुम्हारा शरीर सुरक्षित रहेगा तो फिर तुम्हें और क्या चाहिए?"

नहीं, यह मुझे धोखा देकर मेरी जान लेना चाहता है!

"नहीं, मैं तुम्हारी जान नहीं लेना चाहता। सच तो यह है कि मैं तुम्हारे लिए अपनी जान देना चाहता हूँ!" उसने एक-एक शब्द पर जोर देकर कहा, "अगर तुम समझते हो कि मैं तुम्हारी जान लेना चाहता हूँ तो तुम अभी जा सकते हो।"

मैं उठकर चलने की कोशिश करता हूँ। लेकिन उठ नहीं पाता।

"जाओ! जाते क्यों नहीं?" उसने करीब-करीब धमकाकर कहा।

मेरे भीतर कुछ मरने लगा।

वह झल्ला उठा, "मुझे मालूम नहीं था कि तुम इतने बड़े बेवकूफ हो। मालूम होता तो मैं कभी भी तुम्हें अपना साझीदार बनाने की बात न [illegible] कर लोगे, इसीलिए [illegible] विश्वास न होता तो [illegible]?"

"लेकिन यह सब मुझे बताने की जरूरत क्या थी? आपको एक नये शरीर की ही तो जरूरत है। किसी भी स्वस्थ युवक को पकड़कर उसे इंजेक्शन लगवा सकते थे!"

"किसी भी स्वस्थ युवक को क्यों," उसने तीखे ढंग से कहा, "इंजेक्शन तो मैं तुम्हें भी लगवा सकता था। लेकिन मैं ऐसा करना नहीं चाहता था।"

"वह क्यों?"

"इसलिए कि वैसा करना सचमुच हत्या होती। और जो शख्स मेरी जिन्दगी के सबसे महत्त्वपूर्ण काम में साझीदार बनने जा रहा हो, मैं कम-से-कम उसकी हत्या नहीं कर सकता।"

"होना तो अब भी वही है, जो उस स्थिति में होता। जिसकी हत्या की जा रही हो, उसे कोई अपनी जिन्दगी के कुछ रहस्य बता दे, इससे उसे क्या फर्क पड़ता है ?"

"फर्क यह पड़ता है कि काम के प्रति उसकी भावना बदल जाती है। युद्ध में सैनिक दूसरे पक्ष के सैनिकों को मार देता है तो वह बहादुर कहलाता है लेकिन डाकू किसी का धन छीनने के लिए उसकी हत्या कर दे तो वह अपराधी बन जाता है। यह काम के प्रति भावना का अन्तर है।"

"आपने मुझे अपने रहस्यमय जीवन के बारे में जो कुछ बताया उसका कारण सिर्फ यह नहीं हो सकता। वास्तविक कारण कुछ और है। क्या आप मुझे वह कारण बता सकेंगे ?"

"मैं तुम्हें सब कुछ बताने को तैयार हूँ, बशर्ते तुम उसे समझने की कोशिश करो।"

"मैं कोशिश करूँगा।"

"वास्तविक कारण यह है कि इस महत्त्वपूर्ण काम में पहली क्रिया मुझे इंजेक्शन लगाकर मेरी चेतना खींच लेने की है। इस क्रिया के बाद मैं तो फ्रिज में बन्द हो जाऊँगा। अब जरूरी है कि दो व्यक्ति—वैज्ञानिक और तुम—इस काम के औचित्य से सहमत हों और अगला काम पूरा कर सकें। उस समय तुम दोनों में से एक भी व्यक्ति पीछे हट जाये तो तुम समझ सकते हो—फिर क्या होगा ! इसीलिए मैंने वैज्ञानिकों को और तुम्हें विश्वास में लेना जरूरी समझा ! और मेरे लिए विश्वास में लेने का मतलब है—पूरी तरह विश्वास में लेना।"

इसमें तो कोई शक नहीं कि वे तमाम बातें इसने किसी और को नहीं बतायीं। बाकी लोग तो सिर्फ अफवाहों पर चलते हैं। इसने सचमुच मेरे ऊपर विश्वास किया है। और किसी के विश्वास को तोड़ना···

"विश्वास मैंने जरूर किया है लेकिन इस विश्वास के कारण तुम्हारे ऊपर कोई बन्धन नहीं है।" उसके मुँह से गोली जैसे शब्द निकले, "मेरे विश्वास को तोड़ने से तुम्हें कोई फायदा होता हो तो चूको मत !"

फायदा ? क्या होता है फायदा ? मैंने कभी भी फायदे और नुकसान की भाषा में नहीं सोचा। सोच ही नहीं सका। सोच सकता तो बार-बार नौकरियाँ छोड़ता ? बेकारी, भुखमरी और अपमान झेलता ? मुझे विश्वास है कि मैं फायदे की सोचता तो न जाने कितने मोटे-मोटे फायदे मेरे ऊपर लद जाते। वैसे ही, जैसे अब नुकसान लदे रहे हैं। मैं नुकसानों के नीचे पिसता रहा हूँ और सोचता हूँ—नुकसानों में ही असली फायदा है। फायदा होने से व्यक्तित्व के हनन का जो नुकसान होता, उसके न होने का फायदा।

मैं हमेशा फायदे और नुकसान के इस झमेले से बाहर रहने की कोशिश करता रहा हूँ। इस समय भी नहीं सोच पा रहा कि मेरा फायदा क्या करने में है!

"अगर तुम मुझे गलत न समझो," उसने मेरे ऊपर नजर गड़ाकर कहा, "तो मैं बताना चाहता हूँ कि तुम्हारा फायदा मुझसे सौदा कर लेने में ही है। तुम जिन्दगी-भर अपमान के डर से सौदे करना टालते रहे हो। लेकिन इस सौदे में तुम्हें किसी भी तरह का अपमान नहीं सहना पड़ेगा। यह सौदा बिल्कुल बराबरी की हैसियत से होगा।"

"बराबरी की हैसियत से?"

"हाँ, एकदम बराबरी की हैसियत से। मैं सिर्फ तुम्हारा शरीर लूँगा और बदले में तुम्हें अपार धन तथा यश दूँगा। तुम्हारी महत्त्वाकांक्षा धन कमाने और शान की जिन्दगी बिताने की रही है। लेकिन जो जिन्दगी तुम जी रहे हो, उसे जीते हुए किसी भी सूरत में धन नहीं कमा सकते। मेरे साथ सौदा करके तुम न सिर्फ अपार धन के स्वामी बन सकते हो बल्कि दुनिया के एक बड़े हिस्से पर शासन भी कर सकते हो!"

"नहीं! मैं किसी के ऊपर शासन नहीं करना चाहता। मैं दूसरों की स्वतन्त्रता का हनन नहीं करना चाहता।"

"नहीं चाहते तो तुम्हें इस बात के लिए तैयार रहना चाहिए कि दूसरे तुम्हारे ऊपर शासन करें। वे तुम्हारी स्वतन्त्रता का हनन करें।"

"नहीं, मैं यह भी नहीं चाहता। न मैं अपनी स्वतन्त्रता का हनन होने देना चाहता हूँ और नहीं किसी की स्वतन्त्रता का हनन करना चाहता हूँ।" मैंने उत्तेजित होकर कहा, "मैं आपके साथ कोई सौदा नहीं करना चाहता!"

उसने शान्त स्वर में जवाब दिया, "नहीं चाहते तो इसमें परेशान होने की क्या बात है। मैं इतना अच्छा सौदा कर रहा हूँ कि इसके लिए कोई भी खुशी से तैयार हो जायेगा।"

कोई और कैसे तैयार हो जायेगा? ऐसा बेवकूफ कौन होगा? लेकिन बेवकूफों की दुनिया में कमी नहीं। हो सकता है—कोई हो ही जाये!

"हो जाये नहीं, जरूर हो जायेगा। मैं तुम्हें जो फायदे पहुँचाना चाहता हूँ, वे उसे पहुँच जायेंगे। और तब, तुम खुद अपनी ही निगाह में बेवकूफ बन जाओगे।"

बेवकूफ तो मैं हूँ ही। न होता तो यह मुझे पकड़कर यहाँ बुलव[illegible] इसने कहा था, 'तुम बेवकूफ हो, चालाक हो और ईमानदार हो। इ[illegible] मेरे काम के आदमी हो!'

हूँ, मैं काम का आदमी हूँ। लेकिन किस काम का ? मरने के काम का ? नहीं, मैं इस तरह मरना नहीं चाहता।

"तो किस तरह मरना चाहते हो ? सड़-सड़कर जीना और फिर और भी सड़कर मरना चाहते हो ?"

"नहीं, चाहता तो यह भी नहीं, मगर···"

"मगर क्या ? ये 'अगर' और 'मगर' आदमी को कमजोर बनाते हैं। और जो कमजोर है, वह आगे नहीं बढ़ सकता। तुम्हारे आगे न बढ़ सकने का कारण यही रहा है। अब तुम्हारे सामने दो रास्ते हैं। अगर तुम आगे नहीं बढ़ना चाहते—इसी तरह सड़ी हुई जिन्दगी जीते रहना चाहते हो तो तुम इसके लिए स्वतन्त्र हो। जाओ, अपनी जिन्दगी जिओ ! लेकिन तुम आगे बढ़ना चाहते हो तो आओ मेरे साथ। बोलो, क्या कहते हो ?"

मैं क्या कहूँ इससे ? जो सड़ी जिन्दगी जीता रहा हूँ, उससे तो मरना ही अच्छा···

"मरना कतई अच्छा नहीं। अगर तुम इसे मरना समझते हो तो इनकार कर दो। तुम्हें पूरी छूट है।"

छूट कहाँ है ? यहाँ न जीने की छूट है और न ही मरने की। न हम अपनी जिन्दगी जी पाते हैं और न ही अपनी मौत मर पाते हैं। भविष्य में मुझे जो जिन्दगी जीनी पड़ेगी, वह क्या मेरी अपनी जिन्दगी होगी ? और नहीं होगी तो उसे जीये जाने में क्या तुक है ? अब मुझे जीकर करना भी क्या है ? मैं तो खुद ही अपनी हत्या करना चाहता था। कर नहीं सका। अच्छा है, अब यह उस काम को कर दे !

"नहीं, मैं तुम्हारी हत्या नहीं करना चाहता।"

"तो फिर चाहते क्या हैं ?"

"मैं तुम्हें एक नयी जिन्दगी देना चाहता हूँ।"

"नयी जिन्दगी ?"

"हाँ, नयी जिन्दगी। लेकिन लगता है—तुम इस जिन्दगी को लोगे नहीं। वही सड़ी हुई जिन्दगी जीते रहोगे।"

नहीं, मैं उस जिन्दगी को और नहीं जीना चाहता। मरने के लिए जिस साहस की जरूरत है, वह मुझमें है नहीं। मर नहीं पाऊँगा तो फिर वही गलाजत-भरी जिन्दगी जीनी पड़ेगी। उससे छूटने का एक ही तरीका है कि मैं सोचना बन्द कर दूं और शरीर को इसके हाथों में सौंप दूं। फिर यह उसका जो चाहे करे !

"हाँ, तो बोलो—क्या कहते हो ?" उसने फिर पूछा।

मैंने शान्त भाव से उत्तर दिया, "मुझे मंजूर है।"

"क्या मंजूर है ?"

"जो भी आप चाहें।"

"नहीं, ऐसे नहीं। मैं तुम्हारे साथ किसी भी तरह की जबरदस्ती नहीं करना चाहता। तुम मन से—अपने मन से—तैयार हो, तभी मैं तुम्हारे साथ यह सौदा कर सकता हूँ। तुम्हारे मन में कोई और शंका हो तो कहो !"

"नहीं। अब कोई शंका नहीं।"

"एक बार फिर सोच लो।"

"सोच लिया—सबकुछ सोच लिया।"

"मुझे मालूम था कि आखिर तुम यहीं आओगे। अब मैं तुम्हें अपनी जिन्दगी का अन्तिम रहस्य बताना चाहता हूँ।"

"वह क्या ?"

"मैं अपने मरने और फिर जिन्दा होने के बारे में जो अफवाहें फैलाता रहा हूँ, उनके पीछे असली कारण यह था कि मैं कभी भी मरना नहीं चाहता था। अब मेरे और तुम्हारे मिलने से जो नया व्यक्ति बनेगा, उसके रूप में मैं और तुम दोनों जिन्दा बने रहेंगे। लोग क्योंकि मेरी शक्ल नहीं पहचानते, इसलिए वे नये व्यक्ति को ही 'वह' समझते रहेंगे।" वह कुछ देर सोचता रहा और फिर रहस्यमय ढंग से बोला, "इस महत्त्वपूर्ण परिवर्तन के बारे में मेरे और तुम्हारे सिवा सिर्फ एक आदमी और जानता है।"

"वह कौन ?"

"वैज्ञानिक। लेकिन मैंने उसका भी इन्तजाम कर दिया है।"

"वह क्या ?"

"तुम्हें इंजेक्शन लगने के फौरन बाद उसकी हत्या कर दी जायेगी।"

"वह क्यों ?"

"इसलिए कि मैं इस सारे परिवर्तन को पूरी तरह गुप्त रखना चाहता हूँ। और यह गुप्त तभी रह सकता है, जबकि वैज्ञानिक न रहे।"

मैं एक बार फिर चौंक उठा।

उसने पूछा, "हाँ, तो तुम तैयार हो ?"

"एकदम तैयार।"

"ऐसा न हो कि मुझे इंजेक्शन लगने के बाद तुम्हारा इरादा बदल जाये ?"

"नहीं, ऐसा नहीं होगा।"

"वादा ?"

"पक्का वादा।"

उसने शरीर ढीला छोड़कर एक लम्बी सांस ली और मशीनी कुर्सी से पीठ सटा दी। फिर अचानक गर्दन लम्बी करके सख्त लहजे में बोला, "अगर तुमने इरादा बदला तो इस कुर्सी से जिन्दा नहीं उठ सकोगे!"

तो अब यह मुझे धमकी दे रहा है! लेकिन धमकी तो मैंने कभी किसी की बरदाश्त की नहीं। अपने जिस 'मैं' को बचाने के लिए मैं जिन्दगी-भर तबाही ढोता रहा, आज आखिरी वक्त यह उसी को काट डालना चाहता है। लेकिन नहीं, मैं इसे कटने नहीं दूंगा। जब मुझे मरना ही है तो अपने शरीर को इसकी चेतना का वाहन बनने से बेहतर यह नहीं है कि मैं यहीं और अभी मर जाऊँ! मैं बार-बार चाहकर भी अपनी पसन्द का जीवन नहीं जी सका। कम-से-कम यह मौत तो मेरी पसन्द की मौत होगी। नहीं, मैं इसकी दी हुई जिन्दगी नहीं लेना चाहता। अपनी पसन्द की मौत मरना चाहता हूँ।

"तो तुम्हें मेरा सौदा मंजूर नहीं?" उसने उद्विग्न होकर पूछा।

मैंने सख्त उत्तर दिया, "नहीं! कतई नहीं!"

"तो ठीक है।" वह फुंकार उठा, "मैं अभी तुम्हारा इलाज करता हूँ।" कहकर उसने मेज पर रखे एक यन्त्र को उठाया और अपने सिर पर पहन लिया।

अगले ही क्षण मैंने जो भयानक दृश्य देखा, शायद उसे देखने के लिए ही मैं इतने दिन से जिन्दा था। दुनिया के सबसे सम्पन्न, सबसे प्रभावशाली और सबसे चतुर आदमी का चेहरा एकदम सफेद पड़ गया। वह थर-थर कांपने लगा।

कुछ देर तक वह मेज पर लगे यन्त्रों के साथ छेड़छाड़ करता रहा लेकिन उनमें किसी भी तरह की हरकत नहीं हुई।

उसने सिर पर पहना हुआ यन्त्र झटके से उतारा और एक तरफ फेंक दिया। यन्त्र के उतरते ही उसका चेहरा और भी भयभीत लगने लगा। चमकदार आंखें एकदम बुझ गयीं।

"आप इतने घबरा क्यों रहे हैं?" मैंने पूछा, "आखिर हुआ क्या?"

"सबकुछ हो गया—सब कुछ!"

"फिर भी तो?"

"मैंने कहा था न कि वे लोग बहुत खतरनाक हैं। वे मेरी ताकत को मेरे ही खिलाफ इस्तेमाल कर सकते हैं। मेरे वैज्ञानिक, मेरे सैनिक और मेरे तमाम लोग उस तरफ चले गये हैं। मुझे उम्मीद न थी कि वे ऐसा करेंगे। वे किसी खास लम्हे में क्या सोच रहे हैं, यह तो मुझे पता रहता था लेकिन

अगले ही लम्हे वे क्या सोचेंगे, यह मैं नहीं जानता था। मेरे साथ धोखा हुआ है—धोखा ! अब मैं कुछ नहीं कर सकता। कुछ भी नहीं कर सकता। हम दोनों घिर गये हैं—बुरी तरह घिर गये हैं···" कहते-कहते उसका बूढ़ा शरीर पीछे को लुढ़क गया। गर्दन तिरछी होकर कुर्सी की पीठ पर टिक गयी।

मैं तय नहीं कर पा रहा कि मुझे क्या करना चाहिए या मैं क्या कर सकता हूँ। इस रहस्यमय जिन्दगी को आखिर मेरी आँखों के सामने ही खत्म होना था···

मैं कुछ देर मौत के काले साये में बैठा रहा। फिर उठा और घूमकर उसके पास पहुँचा। उसकी लम्बी गर्दन तिरछी होकर और लम्बी हो गयी थी और भुजाएँ नीचे झूल गयी थीं। मैंने उसकी मुँदी हुई आँखों को देखा और साँस की गति को पहचानने की कोशिश की।

अरे ! यह तो जिन्दा है। मुझे नहीं मालूम उसे जिन्दा पाकर मुझे दुख हुआ ? खुशी हुई ? आश्चर्य हुआ ? या क्या हुआ ? अगर वह मर गया होता तो मुझे उतना डर न लगता। उसे जिन्दा पाकर मुझे ऐसा लगा जैसे मैं किसी मुर्दे के पास खड़ा हूँ। मैं उसी तरह खड़ा उस जिन्दा लाश को देखता रहा।

समय थम गया। कुछ देर वह उसी तरह थमा रहा।

अचानक एक भीषण विस्फोट हुआ। एक भयानक गर्जना। मेरे कान एकदम बहरे हो गये। कुछ भी सुनायी नहीं दे रहा।

रॉकी बिना आवाज किये थरथराने लगा। पूरी दुनिया थरथराने लगी। तभी एक और भी जोर का विस्फोट हुआ। थरथराहट झटकों में बदल गयी। पूरा रॉकी एक साथ डगमगाया और तेजी से जमीन में धँसने लगा।



राजकमल प्रकाशन

'राजकमल' की स्थापना 1947 के पूर्वार्द्ध में हुई थी। छत्तीस वर्षों की इस लम्बी अवधि में राजकमल ने एक जीवन्त प्रकाशन संस्थान की छवि अर्जित की है।

हिन्दी के प्रायः सभी प्रतिष्ठित लेखकों की अधिसंख्य रचनाएँ प्रकाशित करने के साथ-साथ 'राजकमल' ने नयी प्रतिभाओं को भी पाठकों तक पहुँचाने के दायित्व का निर्वाह सफलतापूर्वक किया है।

'राजकमल' के प्रकाशनों पर अब तक ग्यारह साहित्य अकादमी पुरस्कार, दो भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार और चार सोवियतलैण्ड नेहरू पुरस्कार प्राप्त हो चुके हैं। इसके अतिरिक्त, राज्य सरकारों तथा अन्य संस्थाओं द्वारा लगभग तीन दर्जन पुस्तकें पुरस्कृत हो चुकी हैं।

प्रकाशन के क्षेत्र में राजकमल का एक विशिष्ट योगदान है वरिष्ठ लेखकों की ग्रन्थावलियों का प्रकाशन। 1979 में 'सुमित्रानन्दन पन्त ग्रन्थावली' (7 खण्ड) के प्रकाशन के साथ यह कार्य शुरू हुआ, और उसके बाद क्रमशः 'मुक्तिबोध रचनावली' (6 खण्ड), 'हजारीप्रसाद द्विवेदी ग्रन्थावली' (11 खण्ड), 'निराला रचनावली' (8 खण्ड) और 'बच्चन रचनावली' (9 खण्ड) का प्रकाशन हो चुका है। इस समय और भी कई महत्त्वपूर्ण ग्रन्थावलियाँ प्रकाशनाधीन हैं।

'राजकमल' ने 1951 में साहित्यिक त्रैमासिक 'आलोचना' का प्रकाशन शुरू किया, जो अब एक प्रतिष्ठित पत्रिका का रूप ले चुकी है। समय-समय पर इसे हिन्दी के शीर्षस्थ विद्वानों का सम्पादन-सहयोग मिला, और पिछले लगभग डेढ़ दशक से डॉ. नामवर सिंह के सम्पादन में यह पत्रिका हिन्दी आलोचना के नये मानदण्ड स्थापित कर रही है।

श्रेष्ठ साहित्यिक पुस्तकें बहुत कम मूल्य पर दूर-दराज गाँवों-कस्बों में बैठे पाठकों तक पहुँचाने के लिए 'राजकमल' ने 1974 में 'आलोचना पुस्तक परिवार' गठन किया, जिसके हजारों सदस्यों ने इस आम धारणा को गलत सिद्ध किया कि हिन्दी में खरीदकर पुस्तकें पढ़नेवाले समझदार पाठक नहीं हैं।

राजकमल  पेपरबेक्स

'राजकमल पेपरबैक्स' की प्रकाशन-प्रेरणा हमारा यह अनुभव है कि हिन्दी में कमी स्तरीय पाठकों की उतनी नहीं, जितनी कि उनकी आर्थिक क्षमता के दायरे में आनेवाली स्तरीय पुस्तकों की है। 'राजकमल पेपरबैक्स' के माध्यम से इसी कमी को दूर करने की कोशिश की गयी है।

'राजकमल पेपरबैक्स' का उद्देश्य स्वस्थ साहित्य को बृहत्तर पाठक-समुदाय तक पहुँचाना है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए 'राजकमल पेपरबैक्स' में पुस्तकों का मूल्य उनके सजिल्द संस्करणों की अपेक्षा 60 से 65 प्रतिशत कम रखा गया है। 'राजकमल पेपरबैक्स' में हिन्दी की उत्कृष्ट और बहुचर्चित कृतियों के साथ-साथ अन्य भारतीय और विदेशी भाषाओं की भी विशिष्ट कृतियाँ प्रकाशित होंगी।

'राजकमल पेपरबैक्स' की पाठ्य-सामग्री ही नहीं, उनका रूपाकार भी कलात्मक और मनभावन रखा गया है। इन पुस्तकों के आवरण पर सुविख्यात चित्रकारों की कलाकृतियाँ दी जा रही हैं, और यह केवल हिन्दी में नहीं, बल्कि सम्पूर्ण भारतीय प्रकाशन में एक नयी पहल है। 'राजकमल' की यह पहल सृजनात्मक कलाओं की मूलभूत एकता को प्रदर्शित करने और उनके परस्पर सहयोग को बढ़ावा देनेवाली

इस बात का विशेष ध्यान रखा गया है कि 'राजकमल पेपरबैक्स' में प्रकाशित पुस्तकों का पाठ प्रामाणिक और शुद्ध हो। साथ ही, इन पुस्तकों की पाठ्य-सामग्री अपने मूल रूप में, अविकल, होगी, उसे किसी भी प्रकार संक्षिप्त नहीं किया जायेगा।

राजकमल पेपरबैक्स

पहले सेट में प्रकाशित पुस्तक

रागदरबारी / श्रीलाल शुक्ल / 18.00
वे दिन / निर्मल वर्मा / 11.00
मित्रो मरजानी / कृष्णा सोबती / 6.00
कुरु-कुरु स्वाहा / मनोहर श्याम जोशी / 13.00
सुहाग के नूपुर / अमृतलाल नागर / 12.00
बसन्ती / भीष्म साहनी / 10.00
दूसरी परम्परा की खोज / नामवरसिंह / 10 00
अजनबी / आल्बेयर कामू / 6.00
प्रतिनिधि कहानियाँ / भगवतीचरण वर्मा / 10 00
प्रतिनिधि व्यंग्य / हरिशंकर परसाई / 10.00
प्रतिनिधि कविताएँ / अमृता प्रीतम / 10.00

दूसरे सेट में प्रकाशित पुस्तकें

अनामदास का पोथा / हजारीप्रसाद द्विवेदी / 12 00
आधा गाँव / राही मासूम रज़ा / 17.00
लोग / गिरिराज किशोर / 11.00
पगला घोड़ा एवम् इन्द्रजित / बादल सरकार / 10.00
प्रतिनिधि कहानियाँ / फणीश्वरनाथ रेणु / 10.00
प्रतिनिधि कविताएँ / सर्वेश्वरदयाल सक्सेना / 10.00
प्रतिनिधि कविताएँ / फ़ैज़ अहमद फ़ैज़ / 10 00

तीसरे सेट में प्रकाशित पुस्तकें

रेखा / भगवतीचरण वर्मा / 15.00
तमस / भीष्म साहनी / 15.00
एक चिथड़ा सुख / निर्मल वर्मा / 10.00
शह और मात / राजेन्द्र यादव / 13 00
रुकोगी नहीं राधिका / उषा प्रियंवदा / 6.00
प्रतिनिधि कहानियाँ / ज्ञानरंजन / 10.00